RNI No. 7127/60

डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City / 411 2020-22

संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 59 अंक : 12 प्रकाशन तिथि : 25 नवम्बर कुल पृष्ठ : 36 प्रेषण तिथि : 4 दिसम्बर 2022

शुल्क एक प्रति : 15/- वार्षिक : 150/- रुपये पंचवर्षीय 700/- रुपये दस वर्षीय 1300/- रुपये

पूज्य श्री तनसिंह जी

जीने के बहाने मुझे आये नहीं, रंग बिरंगे रंग मुझे भाये नहीं
तेरे ही रंग में जीने के ढंग हैं, प्राणों में प्राण को जोड़ दे।

प्रेरणा पुंज

राजस्थान लोक सेवा द्वारा आयोजित असिस्टेंट प्रोफेसर (कॉलेज शिक्षा) हिंदी विषय में उत्तीर्ण होने की हार्दिक बधाई एवं उज्ज्वल भविष्य की शुभकामनाएँ

आसुसिंह खारा
2nd रैंक

महिपाल सिंह कारटिया
36 रैंक

-: शुभेच्छू :-

महेन्द्र सिंह तारातरा
गोपाल सिंह सुवाला
युवराज सिंह जानसिंह की बेरी
महेंद्र सिंह चाडी
कान सिंह खारा
नेपाल सिंह तिबणियार
छुगा सिंह गिराब
स्वरूप सिंह मुंगेरिया
ईश्वर सिंह गंगासरा
राजूसिंह रेडाणा

नरेशपाल सिंह तेजमालता
गणपत सिंह तामलोर
तनवीर सिंह फोगेरा
गणपत सिंह हुरों का तला
खेत सिंह लीलसर
शैतान सिंह महाबार
गजेन्द्र सिंह झिंझनियाली
अशोक सिंह भीखासर
बालूसिंह कारटिया
समुन्द्र सिंह देदूसर

संघशक्ति

4 दिसम्बर, 2022

वर्ष : 58 अंक : 12

-: सम्पादक :-

लक्ष्मणसिंह बेण्यांकाबास

शुल्क – एक प्रति : 15/- रुपये, वार्षिक : 150/- रुपये, पंचवर्षीय : 700/- रुपये, दस वर्षीय : 1300/- रुपये

विषय – सूची

समाचार संक्षेप		04
चलता रहे मेरा संघ	श्री भगवानसिंह रोलसाहबसर	06
पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)	चैनसिंह बैठवास	07
राजमाता मीनळदेवी	गिरधारीसिंह डोभाड़ा	09
जीवन के ज्वलंत प्रश्नों का उत्तर है स्थितप्रज्ञता	रेवंतसिंह पाटोदा	14
यदुवंशी करौली का इतिहास	राव शिवराजपाल सिंह इनायती	16
गीता एक धर्मशास्त्र	धर्मेन्द्रसिंह आंबली	17
जीवन-सुधार	जयदयाल गोयन्दका	19
महान क्रान्तिकारी राव गोपालसिंह खरवा	भँवरसिंह मांडासी	24
संघ दीप जलाता है	स्वरूपसिंह बांवरला	26
विचार सरिता (षटसप्तति लहरी)	विचारक	27
चलो हम बात बदल कर देखें	ईश्वरसिंह ढीमा	28
न्याय	रघुवीरसिंह बिंजासी	29
अपनी बात		32

समाचार संक्षेप

शिविर :

सितम्बर माह तक श्री क्षत्रिय युवक संघ के प्राथमिक प्रशिक्षण शिविर (बालक व बालिका) होते रहे। अक्टूबर और नवम्बर में भी प्राथमिक शिविरों का आयोजन चलता रहा। अक्टूबर में बालकों व बालिकाओं के माध्यमिक शिविर भी सम्पन्न हुए। मालवाड़ा, गडरा रोड, बापीणी, बालोतरा, आसकी ढाणी (डीडवाना) और धोलेरा में बालकों के माध्यमिक शिविर सम्पन्न हुए। मालवाड़ा तथा धोलेरा के शिविरों में संघप्रमुखश्री का प्रवास रहा। बालिकाओं के माध्यमिक शिविर सिवाना तथा धंधुका में सम्पन्न हुए। कुछ शिविरों में कारण वश सूचित समय में बदलाव किया गया जिससे सूचित समय से पहले ही शिविर हो गया और कुछ में समय आगे बढा दिया गया। कारणवश एक शिविर का स्थान भी बदला गया। दिसम्बर माह में प्राथमिक शिविरों के अलावा पाँच बालकों के तथा एक बालिकाओं का माध्यमिक शिविर हो रहे हैं।

अन्य कार्यक्रम :

विजयादशमी के अवसर पर बाड़मेर में पथ प्रेरणा यात्रा का आयोजन हुआ। शस्त्र पूजन के पश्चात् नागणेची माता मन्दिर से गाँधी चौक, तनसिंह सर्किल होते हुए रानी रूपादे संस्थान पहुँची। यात्रा के समापन कार्यक्रम में संरक्षक श्री भगवानसिंहजी रोलसाहबसर ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि भगवान ने हमें यह दुर्लभ मनुष्य जीवन क्यों दिया है, इसकी खोज हमारी होनी चाहिए। जो यह खोज कर वही करने लग जाते हैं, उनके जीवन में सुख, शान्ति और समृद्धि आती है।

विजयादशमी के अवसर पर गुजरात तथा राजस्थान में अनेक स्थानों पर शस्त्र व शास्त्र पूजन कार्यक्रम आयोजित किये गये। गोहिलवाड़ संभाग के तीन प्रान्तों का सामुहिक कार्यक्रम अवाणिया में सम्पन्न हुआ। धोलेरा प्रान्त के बल्लभीपुर, मेहसाणा प्रान्त के भेंसाणा एवं सूरतशहर में भी सामुहिक कार्यक्रम आयोजित हुए। जयपुर में खातीपुरा, रोजदा व कनकपुर में, खींवसर में, बरनेल में, भाटिया की ढाणी, गढ हरसोलाव, दधवाड़ा, छापरी, कुम्पडास, मेड़ता रोड़, मेड़ता सिटी में सम्पर्क; दिल्ली में शस्त्र पूजन के साथ महराव शेखाजी की जयन्ती भी मनाई गई, फरीदाबाद व गाजियाबाद में भी शस्त्र व शास्त्र पूजन कार्यक्रम रहे। विजयादशमी को ही महाराव शेखाजी की जयन्ती के कार्यक्रम अनेक जगहों पर सम्पन्न हुए। भवानी निकेतन जयपुर, अमरसर, जोधपुर व बीकानेर आदि स्थानों पर आयोजित कार्यक्रम उल्लेखनीय रहे। बीकानेर में इसी दिन राव बणीर जी की जयन्ती भी मनाई गई। अनेक जगह दीपावली स्नेह मिलन के आयोजन भी रहे।

हमारे पूर्वजों और बलिदानियों की जयंति मनाई जाए और उनके जीवन से हम प्रेरणा लें यह आवश्यक है। धीरे-धीरे ऐसी प्रवृत्ति बढ रही है और इसी संदर्भ में 9 अक्टूबर को मिहिर भोज प्रतिहार की, 5 अक्टूबर को राणा पूंजा सोलंकी की, 10 अक्टूबर को पनराज जी की जयंतियाँ मनाई गई। 15 अक्टूबर को ही दूदाजी व तिलोकसी का शौर्य दिवस मनाया गया। शहीद राजेन्द्रसिंह भाटी का तृतीय बलिदान दिवस 28 सितम्बर को मोहनगढ़ (जैसलमेर) में मनाया गया।

जयपुर के संस्थापक सवाई जयसिंहजी की 335वीं जयन्ती 3 नवम्बर को राजपूत सभा जयपुर के तत्वावधान में मनाई गई। इस अवसर पर प्रतिभावान बालकों व बालिकाओं को तथा विशिष्ट उपलब्धि प्राप्त लोगों को सम्मानित भी किया गया। रक्तदान शिविर का आयोजन भी रखा गया।

संघ समाचार :

नागौर के जायल मंडल में जोधियासी, चाउ, जालनियासर, गुगरियाली तथा उंचाईड़ा में सम्पर्क यात्रा की गई। शिविर हेतु बालकों को सूचना दी गई तथा पूर्व में शिविर कर चुके बालकों से सम्पर्क किया। ग्रामीण बन्धुओं को भी श्री क्षत्रिय युवक संघ की साधना का परिचय दिया गया। खींवसर मंडल के देऊ, दांतीणा, आचीणा, करणु व पांचलासिद्धा में सम्पर्क यात्रा की गई। कल्लारायमलोत राजपूत छात्रावास सिवाना में 2 अक्टूबर को प्रांतीय स्नेह मिलन का कार्यक्रम रहा जिसमें कार्ययोजना पर चर्चा हुई।

श्री क्षत्रिय युवक संघ के द्वितीय संघप्रमुख पू. आयुवानसिंहजी की 102वीं जयन्ती अनेक शाखाओं पर सम्पन्न हुई। खदरपुर (गुजरात) के कार्यक्रम में संघप्रमुख श्री ने कहा कि पू. आयुवानसिंहजी मात्र 47 वर्ष की छोटी आयु ही लेकर आए लेकिन अपने जुझारू जीवन से आने वाली पीढ़ियों को प्रेरित करने का कार्य किया। भूपाल पब्लिक स्कूल परिसर चित्तौड़गढ़, श्री कल्याण राजपूत छात्रावास सीकर, श्री अमर राजपूत छात्रावास नागौर, सागू बड़ी, आयुवान निकेतन कुचामन, निम्बी जोधा, हरसोलाव, चारभुजा छात्रावास मेड़ता, दधवाड़ा, देऊ, छापड़ा, उंचाईड़ा, गुगरियाली, ऊंटालड़, ढींगसरी, हिम्मत राजपूत छात्रावास डीडवाना, भायन्दर, मलाड, पीरगांव चौपाटी, खारघर, दुर्गा महिला शाखा भायंदर, भिवंडी, शांताक्रूज, हनवंत राजपूत छात्रावास जोधपुर, श्री क्षात्र पुरुषार्थ टीम अजमेर, द्वारा श्री जगदम्बा छात्रावास केकड़ी, छोटी रानी (पाली), सारंगवास, जोजावर, सुमेरपुर, बी.एन. विश्वविद्यालय परिसर उदयपुर, नृपालदेव छात्रावास जसवंतपुरा, मल्लिनाथ छात्रावास बाड़मेर, बालोतरा शिविर में, श्री भवानी क्षत्रिय बोर्डिंग चोहटन, गंगासरा, भीलवाड़ा, कोटा, बून्दी, ओसियाँ, आहोर, खारिया खंगार, भिंयाड़, पुणे, चामुण्डा माताजी मंदिर बैंगलोर, नेहरू पार्क शाखा दिल्ली, शास्त्रीनगर शाखा दिल्ली, पल्लागाँव (फरीदाबाद), गनोड़ा, पाटन की सिद्धराज जयसिंह शाखा में जयन्ती कार्यक्रम आयोजित हुए। सूरत, जोधपुर और जसवंतपुरा में सम्राट मिहिर भोज प्रतिहार की जयन्ती भी साथ ही मनाई गई।

संघ प्रमुख श्री का 17 से 19 अक्टूबर तक गुजरात प्रवास रहा। वीर मुखड़ोजी गोहिल का जहाँ शरीर गिरा उस घोघा, जहाँ 20 किलोमीटर दूर धड़ गिरा उस खदरपुर के मंदिरों के दर्शन किए और भावनगर पहुँचकर स्वयंसेवकों से मिले। भावनगर में स्नेह मिलन, साणंद के स्नेह मिलन में सम्मिलित हुए। गांधीनगर फिर लेकावाड़ा की बा श्री दशरथ बा महेन्द्रसिंह परमार राजपूत आई.ए.एस. कैरियर एकेडमी के छात्र-छात्राओं को सम्बोधित किया।

चित्तौड़गढ़ जिले का क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन का एक दिवसीय स्नेह मिलन व रात्रि प्रवास कार्यक्रम मुरलिया में 15 अक्टूबर को सम्पन्न हुआ। 16 अक्टूबर को उदयपुर में श्री प्रताप फाउण्डेशन की बैठक सम्पन्न हुई। त्रिलोकपुरा (सीकर) में 15 अक्टूबर को स्नेह मिलन का आयोजन रहा।

14 से 26 अक्टूबर तक स्वामी अड़गड़ानन्द जी महाराज का श्री बालाजी आश्रम में प्रवास रहा। अनेक लोग इस दौरान श्री बालाजी पहुँचकर महाराज श्री के उपदेशों से लाभान्वित हुए।

श्री क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन द्वारा आईटी प्रोफेशनल्स का स्नेह मिलन कार्यक्रम संघशक्ति कार्यालय में 29 अक्टूबर को आयोजित हुआ। इस कार्यक्रम में अनेक प्रोफेशनल्स सम्मिलित हुए, उन्होंने आईटी में समाज के युवाओं को आगे लाने में सहयोग हेतु योजना बनाई। ●

चलता रहे मेरा संघ

{उच्च प्रशिक्षण शिविर आलोक आश्रम बाड़मेर में 24 मई, 2022 को माननीय संरक्षक श्री भगवानसिंह जी रोलसाहबसर द्वारा प्रभात संदेश}

श्री क्षत्रिय युवक संघ के इस शिविर में हम उत्तरोतर हमारे जीवन के लिए आवश्यक बहुत सारी अच्छी बातें सुन रहे हैं, सुनते रहेंगे। एक बात, जो मुख्य रूप से हमको समझने की आवश्यकता है, वह यह है कि चाहे कोई संस्था हो, चाहे कोई संगठन हो, उसका प्राण उस संस्था अथवा संगठन का अनुशासन होता है।

अनुशासन क्या है? यह शिविर में बताया जाता है। इस शिविर में भी आपको बता दिया गया होगा या बता दिया जाएगा। पूरी व्याख्या की जाती है और दो घंटे के बौद्धिक में पूरा समझाया जाता है। अनु का अर्थ है पीछे और शासन का अर्थ है जिसकी चलती है वह शासन। तो जिसकी चलती है, जिसका शासन है, उसकी आज्ञाओं का हूबहू पालन करना ही अनुशासन है। लेकिन हमको यह समझाया जाता है कि सैनिक अनुशासन और हमारे यहाँ के अनुशासन में अन्तर है। सैनिक अनुशासन में पहले आज्ञा मानो और अगर कोई प्रश्न हो तो बाद में कर सकते हैं। हमारा अनुशासन सिखाता है कि पहले किसी भी बात को, सलाह को, आज्ञा को अच्छी प्रकार समझ लें, जो भी प्रश्न हो उनका समाधान कर लें, फिर आज्ञा का पालन करें। इसीलिए अनुशासन पर बौद्धिक होता है, विस्तार से समझाया जाता है और फिर चर्चाएँ होती हैं ताकि कोई प्रश्न हो, शंका हो तो समाधान मिल सके।

चाहे परिवार हो, चाहे समाज हो, चाहे संगठन हो, चाहे सेना या पुलिस हो, उनकी सार्थकता, दीर्घता इसी बात पर निर्भर करती है कि उनके पीछे चलने वाले अनुशासन कितना मानते हैं। अपने यहाँ तो कोई बात समझ में न आए तो सौ बार पूछ सकते हैं, लेकिन पालन करना है। परिवार का अनुशासन सामान्यतः पिता की आज्ञा पर चलता है। पिता की इच्छा पर चलता है। किसी आश्रम का अनुशासन उस आश्रम के मठाधीश, जो आश्रम का मुख्य व्यक्ति है, अथवा गुरु है, उसकी आज्ञा का पालन करना मात्र ही नहीं, उसकी इच्छा का पालन करना है, यही वास्तविक अनुशासन है। यह अनुशासन हमारे जीवन में आ जाए, तो हमारा कल्याण है, समाज का कल्याण है, हमारे राष्ट्र का कल्याण है। जितना इसमें पिछड़े रहेंगे, उतना ही हम हमारे परिवार, हमारे समाज और हमारे राष्ट्र के विकास में बाधा बन जाते हैं।

आप अपने कार्यालयों में सुनते होंगे-'बॉस इज आलवेज राइट' यह अनुशासन सही नहीं है। इसीलिए सोच-समझकर, विचार कर, प्रश्न पूछ कर समझें और पालन करना सीखें। हमारे जीवन में ऐसा अनुशासन आचरित करना सीखें। हम शिविर में यह सीख कर जाते हैं पर बाहर जाते हैं तो बाहरी प्रभाव भी असर दिखाता है। बाहर के वातावरण में इतना वैचारिक और सांस्कृतिक प्रदूषण है कि हम उसमें बह जाते हैं। ऐसे बह जाने वालों से संघ नहीं चलेगा। जहाँ आप जाएँ, किसी कार्यालय में जहाँ काम करते हैं, या किसी संगठन में, या दूसरी जगह जहाँ आप काम करते हैं तो वहाँ भेड़ की गति से, भेड़ की तरह से जो लोग काम करते हैं वह हम नहीं करें। हमारा आचरण ऐसा होना चाहिए कि लोग इच्छा करें कि इसके जैसा हमारा भी आचरण हो। क्षत्रिय युवक संघ हम सबसे यह अपेक्षा करता है। आज के मंगल प्रभात में क्षत्रिय युवक संघ की ओर से यही मंगल संदेश है।

●

गतांक से आगे

पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

– चैनसिंह बैठवास

जन्म व मृत्यु के बीच की यात्रा जीवन है। यह जीवन आखिर है क्या? इसका हेतु क्या है? इसकी समझ न होने से मनुष्य उलझन भरी जिन्दगी जीता है और कई समस्याओं से घिरा रहता है।

सृष्टा ने जीव की रचना किसी हेतु विशेष से की है। मनुष्य अन्य जीव-जन्तुओं की भाँति एक जीव ही है, परन्तु इसमें श्रेष्ठता यह है कि इसमें विवेक-बुद्धि व विचार की शक्ति है, जो अन्य जीवों में बहुत कम है या नहीं है। मनुष्य अपने विवेक-बुद्धि व विचार शक्ति से जीवन के हेतु को खोज सकता है, इसके रहस्य को समझ सकता है। जिस हेतु जीवन मिला है, उसके अनुरूप जीवन जीना ही बुद्धिमता है, उसी में जीवन की सार्थकता है। जीवन की सार्थकता में ही उज्ज्वल भविष्य है। अपने जीवन को सफल बनाने के लिए कई लोग एकान्त गुफाओं और कन्दराओं में बैठकर तपस्या करते हैं, कई जप-तप करते हैं तो कई तीर्थ व्रत करते हैं, कई मंत्र-जप तो कई नाम जप करते हैं, कई पठन-पाठन करते हैं तो कई यज्ञ करते हैं और न जाने इस जीवन की सफलता के लिए, इसको सार्थक बनाने के लिये लोग क्या-क्या नहीं करते, पर पूज्य श्री तनसिंहजी ने अपने स्वयंसेवकों को कहा-हमें ये सब न करके, यह समझना है कि हमें जो जीवन मिला है, वह अपने लिए नहीं, दूसरों के लिए है। हम अपने लिए नहीं, दूसरों के लिये जियें, दूसरों के काम आवें। जिस प्रकार दीपक स्वयं जलकर संसार को प्रकाश देता है, उसी भाँति हम भी संसार के लिये जियें, समाज के लिये जियें। अपने आपको समाज की सेवा में समर्पित कर, अनन्य भाव से समाज की सेवा में लग जावें। समाज की सेवा ही ईश्वर की अराधना है।''

समाज की दयनीय व पतनोन्मुखी दशा से व्यथित होकर पूज्य श्री तनसिंहजी निर्जन पर्वत पर माँ भगवती के सान्निध्य में गये तो उन्हें मालूम हुआ कि समाज की सेवा ही माँ भगवती की आराधना है। समाज को माँ भगवती का स्वरूप मानकर वे उनके चरणों में समर्पित हो गये और जीवनपर्यन्त अपने जीवन को तिल-तिलकर केवल अन्यों को प्रकाश देने के लिए जलाते रहे।

पूज्य श्री तनसिंहजी ने कहा –

''समाज सेवा का कार्य परमार्थपूर्ण है। हमें समाज कार्य ईश्वर को अर्पण करना चाहिए। अपने गुण स्वभावानुसार प्राकृतिक कर्मों को करने से ही हमें भगवत्प्राप्ति होती है, इसलिए समाज के कार्य को ईश्वर से पृथक नहीं करना चाहिए। भगवान की भक्ति कर्म में है, ऐसा गीता का मत है। इसलिए समाज-कार्य यदि भगवदर्थ किया जाता है तो उससे भगवद्भक्ति का स्वरूप भी बनता है। भगवान को पत्थर की मूर्ति में जिस प्रकार हम स्थापित करते हैं, उसी प्रकार समाज सेवक को भी भगवान का प्रतीक उसे समाज कार्य में ही स्थापित करना चाहिए।''

मनुष्य का सर्वांगीण विकास ही समाज का सर्वांगीण विकास है। समाज के सर्वांगीण विकास में ही परमात्मप्राप्ति है। इसलिए पूज्य श्री तनसिंहजी ने समाज को सम्बोधित करते कहा-

''तुम समुद्र और मैं तुम्हारी ओर उछलता आने वाला एक नाला हूँ। तुम मेरे सर्वस्व हो और मैं तुम्हारे चरणों की कृपा का निष्काम उपासक हूँ।''

श्री क्षत्रिय युवक संघ एक साधना मार्ग है, इसलिए पूज्य श्री तनसिंहजी ने श्री क्षत्रिय युवक संघ के स्वयंसेवकों (साधकों) को सम्बोधित करते कहा-

''साधक की शक्ति का एक भी अणु, उसके हृदय का एक भी पवित्र भाव, उसके जीवन का एक भी दिन और उसके द्रव्य का एक भी पैसा जिस दिन समाज-सेवा की साधना से छिपाकर नहीं रखा जाएगा, उसी दिन साधक को एक नया दृष्टिकोण मिलता है। उसके जीवन का प्रत्येक व्यापार, उसका विद्याध्ययन, विवाह, नौकरी और कुटुम्ब-पालन सभी उसी ध्येय के निमित्त होते हुए दिखाई देंगे। जगत के सभी व्यापारों में समाज कार्य का होना, यहाँ तक कि खेल-कूद और गायन आदि में भी समाज जागरण का कार्य दिखाई दे और जिस दिन समाज-जागरण के कार्य में ही संसार के सभी कर्म सम्पादित होते दिखाई दें, उस दिन समाज सेवक बनता है एक ध्येय निष्ठ योगी। तब ध्येय और साधक में कोई अन्तर नहीं दिखाई देगा। दोनों साध्य और साधक एकाकार हो जाते हैं। साधक को ऐसी अवस्था पर पहुँचने के बाद उसका ध्येय दूर नहीं, अपने ही भीतर दिखाई देता है। गीता में ऐसे भक्त साधक का चित्रण करते हुए भगवान ने कहा-

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति।

गीता-6/30

जो मुझको सब स्थानों में और सबको मुझ में देखता है, उससे मैं कभी नहीं बिछुड़ता और न वही मुझसे कभी दूर होता है।

भगवान स्वयं अपने आपको एकीभाव से स्थित होना बताते हैं-

नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता।

गीता-10/11

मैं स्वयं उनके अन्तःकरण में एकीभाव से अर्थात् आत्मभाव में स्थित हुआ ज्ञान के दीप से अज्ञान से उत्पन्न अंधकार को नष्ट करता हूँ।

गीता में कहा है-

''शरीर जड़ धर्मी है, स्वाभाविक रूप से वह निद्रा, प्रमाद आदि तमसाछन्न प्रवृतियों की ओर ही रहता है। कर्मनिष्ठ व्यक्ति विवेक-बुद्धि व विचार शक्ति से इस जड़ता को खत्म कर प्रमाद आदि तमसाछन्न प्रवृतियों से इस जड़धर्मी शरीर को कर्म प्रवृत कर देता है। जड़ता से सर्वथा सम्बन्ध विच्छेद होते ही सर्वत्र विद्यमान (नित्य प्राप्त) परमात्मत्व स्वतः अनुभव में आ जाता है।''

गीता में आगे कहा है-

''जड़ता से सम्बन्ध विच्छेद तभी होगा जब सत्-कर्म, सत्-चर्चा, सत्-चिन्तन केवल समाज हित के लिये ही किये जाय, अपने लिए नहीं।''

शरीर, धन, परिवार, पद, योग्यता, अधिकार आदि सब पदार्थ जो मिले हैं, दूसरों की सेवा में लगाने के लिये ही मिले हैं, अपने उपभोग करने अथवा अपना अधिकार जमाने के लिये नहीं। ये सब पदार्थ समष्टि के ही हैं, व्यष्टि के कभी किसी प्रकार नहीं। इसलिए समष्टि से मिली वस्तुओं को समष्टि की सेवा में लगा देने से परमात्म प्राप्ति हो जाती है।

(क्रमशः)

कहाँ से रवाना हुए, किनको साथ लिया, किन्हें बीच में छोड़ और हमारा काफिला किस उम्मीद में कहाँ तक आया इसे इतिहासकार भी नहीं जान पाएगा। हमें कथायें सुनाने में रुचि भी नहीं है और इसीलिए याद भी नहीं रखते। याद हम केवल आज को रखते हैं और उसी में भूतकाल को गर्क कर भविष्य के स्वप्न देखा करते हैं।

- पू. तनसिंहजी

राजमाता मीनळदेवी

– गिरधारीसिंह डोभाड़ा

'जो कर झुलावे पालना, वो कर जग पर शासन करे'

राजपूत जाति नर रत्नों की जननी कही जाती है। केवल नर-रत्न ही नहीं बल्कि उसने नारी-रत्न भी संसार को दिये हैं। संसार में राजपूत जाति ने जितने अवतारी पुरुष, ऋषि, तपस्वी, योगीजन, ज्ञानी, दानी, शरणार्थी रक्षक, सत्यवादी, वचन पालक, स्वामीभक्त, वीर योद्धा और शास्त्र विशारद दिये हैं, उतने किसी जाति ने नहीं दिये हैं। वैसे ही इस जाति ने संसार को सतियाँ, पतिव्रताएँ, विदूषियाँ, अवतारी देवियाँ, वीर जननियाँ, सुशासन प्रियाएँ, क्षमादानी, त्यागी और वीरांगनाएँ दी हैं, उतनी किसी जाति ने नहीं दी हैं। प्राचीनकाल से मध्यकाल व अर्वाचीन काल में भी जब तक क्षत्रिय (राजपूत) जाति के पास शासन की धुरी रही तब तक राजपूत नारी जगत ने अपने पति के साथ या अपने पुत्र के साथ सहयोग करके सुशासन दिया है। महाराणा सांगा भार्या कर्मावती, वीर शिरोमणि प्रताप जननी जयंताबाई, शिवाजी जननी जीजाबाई, स्वामी भक्त दुर्गादास जननी नेतकंवर, राजपूत जाति में नई चेतना जगाने वाले पू. तनसिंहजी जननी माँ सा मोती कंवर, भक्त शिरोमणी मीराबाई, तपस्विनी बाला सती जी आदि का नाम बड़े आदर व गर्व से लिया जाता है। वैसा ही एक नाम है मध्यकाल में गुजरात में सुवर्णयुग के प्रणेता सिद्धराज जयसिंह की जननी सुशासन और न्याय प्रिय मीनळदेवी।

दक्षिण भारत के उस समय के चन्द्रपुर के कदंब वंश के राजा जयकेशी की मयणल्ला नामक एक पुत्री थी। गुजरात में सोलंकी वंश के राजा कर्णदेव प्रथम का राज्य था। कर्णदेव भी अपने पूर्वज मूलराज प्रथम, भीमदेव प्रथम की तरह प्रतापी राजा था। उसके समय में भी गुजरात की ख्याति दक्षिण तक फैली हुई थी। सुप्रसिद्ध सोमनाथ का शिव मंदिर गुजरात में आया हुआ है। भारत भर के यात्री सोमनाथ भगवान के दर्शनार्थ आते थे। दक्षिण भारत से भी यात्री आते थे। राजकुमारी मयणल्ला उन यात्रियों से सोमनाथ मंदिर की भव्यता और राजा कर्णदेव के स्वरूप व ख्याति की बातें सुना करती थी। राजा कर्णदेव की एक तस्वीर देखकर राजकुमारी उस पर मोहित हो गई और उसे अपने पति रूप में पाने की इच्छुक हो गई। राजा कर्णदेव के शासनकाल से पूर्व से ही सोमनाथ भगवान के दर्शन के लिए आने वाले यात्रियों से यात्री-कर लिया जाता था। राजकुमारी मयणल्ला इस यात्री-कर की जानकारी से दुखी थी। राजकुमारी मयणल्ला स्वयं भी एक महत्त्वाकांक्षी नारी थी। वह सद्‌गुणी, न्यायप्रिया और सुसंस्कारी थी। गुजरात को और अधिक शक्तिशाली, समृद्ध बनाकर इस यात्री-कर को समाप्त करने की चाह उसमें जगी। यह तभी सम्भव था जब वह गुजरात की साम्राज्ञी बने। वह एक शक्तिशाली और गुण सम्पन्न भावी राजा की माता बने। राजकुमारी ने अपने पिता राजा जयकेशी के सामने विवेक व विनयपूर्वक अपनी इच्छा व्यक्त की। अपनी पुत्री के गुण संस्कार राजा को ज्ञात थे। राजा ने अपनी पुत्री की इच्छा पूर्ति के लिए एवं राजकीय सम्बन्ध सुदृढ़ बनाने की इच्छा से अपनी सहमति दे दी।

अपने पिता राजा जयकेशी से आशीर्वाद लेकर राजकुमारी मयणल्ला अपनी कुछ दासियों और सेवक एवं कुछ अंगरक्षकों को लेकर गुजरात की राजधानी पाटण की ओर चल पड़ी। उत्तर-दक्षिण की सीमा, नर्मदा नदी को पार करके राजकुमारी का कारवां कुछ माह बाद पाटण के पास सरस्वती नदी के किनारे आ पहुँचा। पाटण नगर के पास दुर्लभ तालाब के पास सुरम्य उद्यान में राजकुमारी के काफिले ने पड़ाव डाला। उद्यान के बगल में ही कुछ शामियाने लगाये गये।

उद्यान सुन्दर, सुरम्य था। जो हरी घास, रंग-बिरंगी फूलों के पौधों, पेड़, लताओं से मनोहारी था। उद्यान में मयूर, कोकिल और तरह-तरह के परिंदे किलकिलाहट करते थे। चाँदनी रात में उस उद्यान की परछाई दुर्लभ सरोवर (झील) में जो दिखती थी वह झील की शोभा में चार चांद लगा देती थी। उस उद्यान में राजकुमारी मयणल्ला अपनी मनोकामना पूर्ण होने की प्रतिक्षा में दिन बिता रही थी।

राजा भीमदेव प्रथम की महारानी और राजा कर्णदेव की माता रानी उदयमती शिल्प और स्थापत्य की बेजोड़ बावड़ी का निर्माण करवा रही थी, जो उस उद्यान और झील के पास ही थी। राजमाता उदयमति उद्यान की सैर करने व बावड़ी का निरीक्षण करने समय-समय पर आया करती थी। उस उद्यान के पास लगे शामियानों को राजमाता उदयमति ने देखा। दासी को भेजकर पता लगवाया कि चन्द्रपुर की राजकुमारी मयणल्ला का यह शिविर है। दक्षिण में चन्द्रपुर का राजा जयकेशी भी एक प्रतापी राजा था। राजमाता राजकुमारी के शिविर में उससे मिलने गई। राजकुमारी मयणल्ला ने बड़े आदर के साथ राजमाता का सत्कार व अभिवादन किया। राजमाता राजकुमारी के विवेक, विनय और शिष्टाचार से प्रभावित हुई। राजमाता ने राजकुमारी का चन्द्रपुर से सीधे ही पाटण आने का प्रयोजन पूछा। राजकुमारी ने बिना संकोच विवेक व विनयपूर्वक अपनी कामना का जिक्र किया। राजकुमारी मयणल्ला ने राजमाता से निवेदन किया कि मैं महाराजा कर्णदेव से विवाह करके आपकी पुत्र वधू बनना चाहती हूँ। मैं महाराज से एक वीर पुत्र प्राप्त करना चाहती हूँ। मैं उस पुत्र को वीर, अजेय, योद्धा, सद्‌गुणी, सर्वगुण सम्पन्न, संस्कारी, न्यायी, नीतिवान और सुशासक बनाना चाहती हूँ। मुझे लगता है कि आपके प्रतापी पुत्र महाराज कर्णदेव से प्रतापी पुत्र पाकर ही मेरी यह इच्छा पूर्ण हो सकती है।

राजा कर्णदेव भी उद्यान और दुर्लभ सरोवर की सैर करने और निर्माणाधीन बावड़ी का निरीक्षण करने के लिये वहाँ आया करते थे। कर्णदेव ने उद्यान के बगल में ही लगे दक्षिण के चन्द्रपुर राज्य के शिविर को देखकर अपने सिपाही भेजकर जाँच करवाई कि यह शिविर यहाँ क्यों लगाया गया है और शिविर में कौन है। सिपाहियों ने तलाश करके राजा को बताया कि यह शिविर चन्द्रपुर के राज्य का है और शिविर में वहाँ के राजा जयकेशी की पुत्री राजकुमारी मयणल्ला है।

राजा कर्णदेव ने अपनी विश्वास प्राप्त सेविकाओं को राजकुमारी के शिविर में भेजकर यह पता लगाया कि वह राज परिवार के किसी पुरुष को साथ लिये बिना यहाँ अकेली ही क्यों आई हैं। राजकुमारी ने उन सेविकाओं को बताया कि वह राजा कर्णदेव के साथ स्वयं अपने विवाह हेतु आई है। वह पाटण और चन्द्रपुर दोनों राज्यों का वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर दोनों राज्यों के राजनैतिक सम्बन्धों को सुदृढ़ करना चाहती है। वह राजा कर्णदेव के रूप और कीर्ति से प्रभावित होकर यहाँ स्वयं ही आई है। उसे मालूम है कि पाटण में किसी भी नारी को कोई भय नहीं है, उसके मान-सम्मान में कोई खोट नहीं है। इसलिए वह अपनी सेविकाओं और कुछ सेवकों को साथ लेकर अकेली ही आई है।

वैसे तो राजकुमारी मयणल्ला कुशाल बुद्धिशाली, तेज राजनैतिक समझ वाली, प्रभावशाली और महत्त्वाकांक्षी थी लेकिन दक्षिण की होने के कारण स्वाभाविक रूप से कुछ सांवले रंग की थी। जबकि राजा कर्णदेव कामदेव के समान बहुत स्वरूपवान था। जिससे उसने मयणल्ला के प्रस्ताव को अस्वीकार किया और उसमें कोई रुचि नहीं दिखाई।

समय बीतता गया। राजा अपने निर्णय पर दृढ था। उसने राजकुमारी के प्रति बेरुखी ही दिखाई। इधर राजकुमारी भी अपने निर्णय पर दृढ थी कि वह विवाह तो कर्णदेव से ही करेगी। आखिर उसने राजमाता की सहायता लेने का निश्चय किया। जब राजमाता उद्यान

की सैर करने आई तो राजकुमारी ने अपनी विश्वस्त सेविका को राजमाता के पास भेजकर अपने मिलने की अनुमति माँगी। राजमाता भी राजकुमारी की बहुत इज्जत करती थी, वह स्वयं राजकुमारी के शिविर में उससे मिलने आई। राजकुमारी ने राजमाता के चरण छूकर उनका अभिवादन किया और बैठने के लिये उनके योग्य आसन दिया। राजमाता राजकुमारी की इच्छा जानती ही थी, फिर भी उन्होंने राजकुमारी के पुन: मिलने का कारण जानना चाहा। राजकुमारी ने राजमाता उदयमति को अपनी मनोकामना पुन: व्यक्त करते हुए राजमाता से प्रार्थना की कि वह विवाह करेगी तो राजा कर्णदेव से ही करेगी वरना वह अग्नि स्नान कर लेगी, यह उसकी दृढ प्रतिज्ञा है। क्षत्रिय कन्या एक बार जिसे अपना पति मान लेती है तो वह उससे ही विवाह करती है, दूसरे तो उसके लिये भाई और पिता समान ही होते हैं। राजमाता से उसने प्रार्थना की कि मैं अपनी प्रतिज्ञा आपकी सहायता से ही पूर्ण कर सकती हूँ। आप मुझे जीवित रखना चाहती हो और पाटण व चन्द्रपुर को निकट लाकर शक्तिशाली बनाना चाहती हो तो मेरी सहायता कीजिए।

राजमाता उदयमती-जूनागढ़ (सोरठ) के चुड़ासमा राजवंश की थी। वह गहरी राजनैतिक सूझ वाली थी। वह स्वयं भी महत्त्वाकांक्षी थी। वह चाहती थी कि उसका पुत्र भी अपने पुरखों की तरह शक्तिशाली, सुशासक व प्रसिद्ध राजा बने। उसने मयणल्ला देवी को विश्वास दिलाया कि वह अवश्य उसकी सहायता करेगी। यदि राजा कर्णदेव मयणल्ला के साथ विवाह का प्रस्ताव अस्वीकार करेगा तो वह स्वयं भी राजकुमारी के साथ अग्नि स्नान करेगी। राजमाता राजकुमारी को यह दृढ विश्वास दिलाकर राजमहल चली गई।

राजमहल आकर राजमाता ने अपने राज्य के महामात्य मुंजाल मेहता से राजा कर्णदेव और मयणल्ला देवी के विवाह के सम्बन्ध में परामर्श किया। उसने भी राजमाता के विचार का समर्थन किया। महामात्य मुंजाल बड़ा मुस्सदी था। उसने राजा कर्णदेव को मयणल्ला के साथ विवाह करने के लिये राजी कर लिया। आखिर नारी की दृढ शक्ति, दृढ प्रतिज्ञा के आगे राजा को झुकना पड़ा, क्योंकि उनकी प्रतिज्ञा राजा और राज्य के हित में थी। राजा कर्णदेव और मयणल्ला का विवाह सम्पन्न हुआ। अब महारानी मयणल्ला महाराणी मीनळदेवी के नाम से बुलायी जाने लगी। समय बीतते महारानी मीनळदेवी ने शुभ मुहूर्त में एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम जयसिंह रखा गया, जो बड़ा प्रतापी राजा सिद्ध हुआ, जो सिद्धराज जयसिंह के नाम से इतिहास में प्रसिद्ध हुआ। गुजरात की लोकभाषा में वह 'सधराजेसंग' के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

बाल राजकुमार जयसिंहदेव एक दिन अपने बाल मित्रों के साथ खेल-खेल में ही राज्य सिंहासन पर बैठ गया। ज्योतिषियों ने बताया कि यह शुभ मुहूर्त है जिससे राज्य का अभ्युदय होगा। इसलिये राजा कर्णदेव ने बाल राजकुमार का उसी मुहूर्त में राज्याभिषेक कर दिया। अब पाटण-गुजरात का राजा नाबालिग उम्र में ही जयसिंह देव हुआ। इसके बाद कुछ ही वर्ष में राजा कर्णदेव ने हरिस्मरण करते हुए देह त्याग कर दिया। अब राज्य की धुरी राजमाता मीनळदेवी ने संभाल ली। वह बाल राजा जयसिंहदेव के नाम से महामात्य सांतनु और मुंजाल मेहता की सहायता से शासन करने लगी।

राजमाता मीनळदेवी ने बाल राजा जयसिंह को मल्ल विद्या, गज विद्या, शस्त्र विद्या तथा नीति शास्त्र और सुशासन प्रणाली में पारंगत बनने की शिक्षा दिलाई। राज्य विस्तार के साथ-साथ सुशासन करना, प्रजा हित का ध्यान रखना, लोक कल्याण के कार्य करना, प्रजा के सुख-दुख की जानकारी लेना जैसे आदर्श राजा के गुणों की शिक्षा दी थी। आदर्श पर चलने के लिये और सुशासन देने के लिये राजा को

स्वयं बलवान बनना चाहिए और राज्य में छोटी-बड़ी, अच्छी-बुरी घटनाओं की भेष बदलकर, छुपे भेष में जानकारी लेनी चाहिए। इस प्रकार राजमाता ने अपने बाल राजा में आदर्श राजा के सभी सुसंस्कार दिये और इसी कारण राजा जयसिंह हर कार्य को, जो उसने निश्चित किया या इरादा रखा, उसे सिद्ध करके दिखाया। इसीलिए वह 'सिद्ध राज जयसिंह' कहलाया और उसका शासनकाल गुजरात का सुवर्ण युग रहा।

बाल राजा जयसिंह की युवावस्था प्राप्त होने तक शासन चलाना इतना आसान नहीं था। कर्णदेव की मृत्यु के बाद उसके सौतेले भाई क्षेमराज के पुत्र देवप्रसाद ने जयसिंह को नाबालिग समझकर राजकार्य में हस्तक्षेप करने का प्रयास किया लेकिन राजमाता मीनळदेवी ने मंत्री सांतनु की सहायता से उसे विफल कर दिया। राजमाता के प्रभाव के कारण अपनी असफलता पर देव प्रसाद ने अग्नि स्नान कर लिया। देवप्रसाद के नाबालिग पुत्र त्रिभुवन पाल को राजमाता ने अपने महल में बुला लिया और उसका लालन-पालन किया। जयसिंह उसे अपने सगे भाई की तरह चाहता था।

राजा कर्णदेव की मृत्यु के पश्चात् उसका मामा मदनपाल जो जूनागढ़ का था, राजधानी पाटण में ही रहता था, स्वच्छन्दी हो गया। राजा जयसिंह किशोर होने के कारण मदनपाल राजकाज में दखल करता था। प्रजा को परेशान करता था और निरपराधी को भी दंडित करता था। उसकी ऐसी हरकत कुछ ज्यादा बढ गई थी। एक बार पाटण के उत्तम वैद्य को अपना इलाज कराने के बहाने अपने निवास पर बुलाकर कैद कर लिया और बत्तीस हजार जैसी बड़ी रकम लेकर उसको मुक्त किया। जब युवा राजा जयसिंह को इसकी खबर मिली तो राजमाता मीनळदेवी से सलाह कर सांतनु मंत्री की सहायता से मदनपाल की हत्या करवा दी। राजमाता मीनळदेवी और राजा जयसिंह अपने सगे सम्बन्धियों से अधिक अपनी प्रजा का हित देखते थे।

गुजरात राज्य की पश्चिमी सीमा पर अरब-सागर के किनारे भगवान आषुतोष का प्रसिद्ध सोमनाथ का मंदिर आया हुआ है। देश-विदेश से लोग भगवान श्री सोमनाथ के दर्शनार्थ आते थे। राजमाता मीनळदेवी ने भगवान सोमनाथ के दर्शनार्थ पाटण से सोमनाथ तक का यात्रियों का संघ निकाला। सोमनाथ जो प्रभास पाटण कहलाता था, राजमाता के काफिल से कुछ ही दूरी पर था। राजमाता ने कई लोगों को निराश होकर वापस लौटते देखा, पूछा तो पता चला दर्शनार्थ यात्री कर न चुका सकने के कारण बिना दर्शन ही वापस लौट रहे हैं। राजमाता ने सोचा कि मेरे राज्य की प्रजा यात्री कर न चुका सकने के कारण बिना दर्शन किये निराश होकर वापस जा रही है तो मैं कैसे भगवान के दर्शन कर सकती हूँ। मैं राजमाता हूँ तो क्या हुआ, भगवान के सामने तो राजा और प्रजा दोनों ही समान है।

राजकार्य की व्यवस्था करके कुछ ही दिनों बाद राजा जयसिंहजी भी अपने कुछ सैनिकों को साथ लेकर भगवान सोमनाथ की यात्रा के लिये निकल पड़ा। जब वह सोमनाथ के निकट पहुँचा तो उसने राजमाता के काफिले का शिविर देखा। शिविर में जाकर राजा ने राजमाता से भेंट की तो उसे मालूम हुआ कि राजमाता भगवान सोमनाथ के दर्शन किए बिना ही वापस पाटण लौट रही है। राजा के पूछने पर राजमाता ने कहा कि जब अपने राज्य की प्रजा और अन्य राज्यों की प्रजा बिना यात्री कर दिए भगवान के दर्शन नहीं कर सकती तो मैं कैसे दर्शन कर सकती हूँ। तुम यदि सभी के लिए यात्री कर समाप्त कर दो तभी मैं प्रजा के साथ भगवान श्री आषुतोष के दर्शन करूँगी। पाटण राज्य की आय में सोमनाथ के यात्री कर का बहुत बड़ा हिस्सा था, फिर भी राजमाता के अनुरोध पर राजा ने यात्री-कर समाप्त कर दिया। यह राजमाता मीनळदेवी के दिल में प्रजा के प्रति प्रेम और न्याय दर्शाता है।

ऐसे तो राजमाता मीनळदेवी ने कई तालाब और

मंदिरों का निर्माण करवाया था, लेकिन धोलका का मलाव तालाब राजमाता की न्याय प्रियता का उत्तम उदाहरण है। धोलका (गुजरात) के पास राजमाता एक तटबंधी तालाब का निर्माण करवा रही थी। तालाब गोलाकार बनाना था। लेकिन उस तालाब की सीमा में एक गणिका का छोटा-सा निवास स्थान आता था। राजमाता ने गणिका जो माँगे वो कीमत देने को कहा लेकिन गणिका वह जमीन देना नहीं चाहती थी। राजा जबरदस्ती भी वह जमीन ले सकता था लेकिन राजा ने ऐसा नहीं किया और तालाब की उतनी गोलाई छोड़ दी, यह थी राजमाता की न्याय-प्रियता। आज भी वह तालाब मौजूद है और कहा जाता है कि न्याय देखना हो तो धोलका का मलाव तालाब देखो।

एक जनश्रुति के अनुसार जूनागढ़ के राजा रा' नवगण को सिद्धराज ने पराजित कर उसे मुँह में तिनका लेने को मजबूर कर दिया, इसलिए रा' नवगण ने पाटण के द्वार को तोड़ने की प्रतिज्ञा की थी। वह तो अपनी प्रतिज्ञा पूरी नहीं कर सका लेकिन उसके बाद उसके पुत्र रा' खेंगार ने पाटण का द्वार तोड़ा था। उस समय सिद्धराज मालवा गया हुआ था। अपने साथ रा' खेंगार उस कन्या को भी ले गया जिसके साथ सिद्धराज का विवाह होने वाला था। हालांकि वह कन्या और रा'खेंगार एक दूसरे के साथ प्रणय सम्बन्ध में बँधे थे। जूनागढ़ आकर रा' खेंगार ने उस कन्या से विवाह कर लिया जिसका नाम सोनल देवी था। जो जनश्रुति में राणक देवड़ी के नाम से पुकारी जाने लगी। जयसिंह ने जूनागढ़ पर आक्रमण किया। लम्बे समय तक के घेरे के बाद जयसिंह दुर्ग में प्रवेश करने में सफल हुआ। रा' खेंगार और जयसिंह के घमासान युद्ध में रा' खेंगार मारा गया। सिद्धराज जयसिंह राणक देवी को लेकर पाटण आने को निकल पड़ा। पाटण में राजमाता मीनळदेवी को यह खबर मिली तो राजमाता उसे रोकने के लिये कुछ सैनिकों को लेकर जूनागढ़ की ओर निकल पड़ी, क्योंकि वह जानती थी कि राणक देवी महासती है और वह यदि सिद्धराज को शाप दे देगी तो महाअनर्थ होगा। वढवाण में दोनों काफिले मिले। राजमाता ने राणकदेवी पर जबरदस्ती न करने के लिये जयसिंह को मना लिया। राजमाता ने राणक देवी से मिलकर उसकी इच्छा जानी। राणक देवी ने अपने पति रा' खेंगार का सिर अपनी गोद में लेकर सती होने को कहा। राजमाता ने रा' खेंगार का सिर मंगवाया। राणकदेवी अपने पति का सिर लेकर वढवाण के पास भोगावो नदी के तट पर सती हुई। उसका मंदिर आज भी वहाँ मौजूद है और लोग वार-त्योहार पर उस सती के दर्शन करने के लिये आते हैं।

राजमाता मीनळदेवी और उसके पुत्र सिद्धराज जयसिंहदेव की न्यायप्रियता की अनेक कथाएँ गुजरात के लोक साहित्य में पढने और सुनने में आती हैं। माता मीनळदेवी ने सिद्धराज में महान योद्धा, कुशल सेनापति, कुशल वहीवटकर्ता, सर्वधर्म समभावना, न्यायप्रियता और प्रजा हितैषी के गुण कूट-कूट कर भरे थे। राज्यारोहण से लेकर आने वाली चुनौतियों को माता और मंत्रियों की सहायता से सफलतापूर्वक पार की जिससे वह गुजरात का महान प्रतापी राजा सिद्ध हुआ और उसका राज्यकाल गुजरात का सुवर्ण युग कहलाया। राजमाता मयणल्ला-मीनळदेवी ने अपनी सद्इच्छा, सद्महत्त्वाकांक्षा को अपने सद्गुणों से पूर्ण कर एक आदर्श माता के रूप में सिद्ध कर दिखाया। वह सच्चे अर्थ में 'माता निर्माता भवति' सिद्ध हुई।

'या देवी सर्वभूतेषु मातृ रूपेण संस्थिता
नमस्तस्यै-नमस्तस्यै-नमस्तस्यै नमोनमः:'

●

हमारा व्यक्तित्व जैसा होगा, वैसा ही दुनिया का नक्शा हम बनाएँगे। इसे 'चारित्र्य' कहते हैं।

- दादा धर्माधिकारी

जीवन के ज्वलंत प्रश्नों का उत्तर है स्थितप्रज्ञता

– रेंवतसिंह पाटोदा

यह प्रकृति का वैचित्र्य है कि समस्त मानव जाति में चेतना के स्तर पर तत्वगत एकता और संवेदनाओं, प्रवृत्तियों आदि का मूल स्वरूप समान होते हुए भी प्रत्येक मनुष्य अपने में विशिष्ट और अन्यों से अलग होता है। सामान्यता और विशिष्टता का यह विरोधाभाषी संगम मनुष्य के जीवन की स्थिरता और गत्यात्मकता, दोनों का ही कारण है। जीवन की गत्यात्मकता जहाँ प्रत्येक मनुष्य के लिये चुनौतियों और समस्याओं को विशिष्ट बनाती है वहीं जीवन की स्थिरता उन चुनौतियों और समस्याओं के समाधान के लिये आधार प्रदान करती है। जीवन की गति के कारण ही प्रत्येक व्यक्ति को विकास की ओर स्वयं ही यात्रा करनी पड़ती है और समस्त मार्गदर्शन व सहयोग की उपलब्धता के बाद भी व्यक्तिगत प्रयत्न के अभाव में यह यात्रा कभी पूरी नहीं हो सकती। यही कारण है कि व्यक्ति के जीवन में सदैव ऐसे जलते हुए प्रश्न विद्यमान रहते हैं जिन्हें उसे स्वयं ही हल करने होते हैं और उन्हें हल करने पर ही विकास मार्ग पर उसकी यात्रा सम्भव होती है। ये ज्वलंत प्रश्न बाह्य संसार में भी उपस्थित होते हैं तो अंत:करण की ग्रंथियों से भी इनका जन्म होता है। हम अपने जीवन का अवलोकन करेंगे तो पाएँगे कि हमारे सामने भी ऐसे जलते हुए प्रश्न सदैव उपस्थित हैं जिनके समाधान के बिना हमारी यात्रा रुकी हुई है। चाहे साधनों का अभाव हो या परिवार का असहयोग हो, सामर्थ्य की कमी हो या हीनता का भाव हो, अहंकार और दर्प हों या इच्छाएँ और वासनाएँ हों, मार्ग की अस्पष्टता हो या लक्ष्य की अनभिज्ञता हो, शरीर का आलस्य हो या मन का नैराश्य हो, ऐसे न जाने कितने ही प्रश्न हैं जिनके हमारे पास या तो समाधान नहीं है या आत्मचिंतन के अभाव में हम इन प्रश्नों को देख ही नहीं पाते। फिर जीवन की गत्यात्मकता इन प्रश्नों के स्वरूप को भी बदलती रहती है और स्वयं प्रश्नों को भी। इसलिए जब कभी हम किसी प्रश्न को पकड़कर उसका समाधान करने का प्रयास करते भी हैं तो पाते हैं कि उसका समाधान होते-होते उसकी अग्नि से कई नए प्रश्न सुलग उठते हैं। ऐसा हम सभी का अनुभव रहता है और अपने आस-पास देखेंगे तो पाएँगे कि अधिकांश व्यक्तियों का जीवन इसी तरह जलते हुए प्रश्नों की एक शृंखला बन गई है जो उन्हें सभी ओर से उलझाये हुए है।

ऐसे में हमारा यह चिंतन अवश्य होना चाहिए कि यदि प्रश्न को पकड़ने से समस्या सुलझने के बजाएऔर अधिक उलझती है तो फिर उपाय क्या है? जीवन की गति के कारण उत्पन्न प्रश्न तो अनंत हैं तो क्या अनंत समाधानों की खोज में भटकते रहना ही मनुष्य की नियति है? यदि ऐसा है तब तो जीवन एक अनंत दौड़ मात्र बनकर रह जाएगा जिसमें शान्ति और आनंद की कोई संभावना ही नहीं बचती। संसार में अनेक विचारधाराओं का जन्म इसी प्रकार के अनुभव से हुआ है और इसलिए उन विचारधाराओं ने या तो परम शान्ति और परम आनंद के अस्तित्व की संभावना को ही नकार कर केवल भौतिक सुख में ही जीवन का अर्थ ढूंढ़ने की निष्फल चेष्टा की है अथवा जीवन की समाप्ति के बाद किसी अन्य लोक में स्वर्गिक आनंद के कल्पित वादे किए हैं। लेकिन भारतीय मनीषा का अनुभव ऐसा नहीं रहा है। उसने तो मनुष्य जीवन में ही परम आनंद और अखंड शान्ति

की शाश्वत उपलब्धि का अनुभव किया और जीवन की अनंतमुखी समस्याओं के समाधान का भी सरलतम उपाय बताया और यह उपाय था- स्थितप्रज्ञता। मनुष्य के पास उसकी सभी समस्याओं का समाधान ढूंढ़ने का एकमात्र स्रोत उसकी प्रज्ञा है। अपनी प्रज्ञा से ही वह जीवन के प्रश्नों को हल करने की चेष्टा करता है लेकिन यह प्रज्ञा यदि स्वयं गतिमान है तो जीवन की गत्यात्मकता से उद्भूत समस्याओं को रोकने की क्षमता उसमें नहीं आ पाती। यह क्षमता तो मनुष्य की प्रज्ञा में तभी उत्पन्न हो सकती है जब वह स्वयं स्थिर हो और वह स्थिर तभी हो सकती है जब वह जीवन के स्थिर तत्व के साथ संलग्न होकर एकाकार हो जाए। यही स्थितप्रज्ञता की स्थिति है और इसी से जीवन में वह संतुलन आ सकता है जो सभी समस्याओं के समाधान के लिए आधार का कार्य करता है।

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि मनुष्य की समस्याओं का वास्तविक हल उसकी स्थितप्रज्ञता में ही है, इसलिए मनुष्य की सामूहिकता के आधार पर निर्मित कोई व्यवस्था भी इस सत्य को अनदेखा नहीं कर सकती और यदि वह ऐसा करती है तो वह एक समस्या को सुलझाने के उपक्रम में कई नई समस्याओं की जनक बनेगी जैसा कि आज सभी ओर होता दिखाई भी दे रहा है। बुद्धि की अस्थिरता का ही परिणाम है कि आज का मनुष्य कामनाओं और भोगों में उलझा हुआ है, साथ ही द्वेष और घृणा का शिकार होकर विनाश के मार्ग की ओर भी बढ़ता जा रहा है। मानवता की इन समस्याओं का समाधान केवल उसकी बुद्धि की स्थिरता अर्थात् स्थितप्रज्ञता में ही है। इसीलिए श्री क्षत्रिय युवक संघ भी अपने स्वयंसेवक को स्थितप्रज्ञता का अभ्यास करवाता है जिससे वह छोटी-छोटी बातों में उद्वेलित होने की बजाए समस्या के सही स्वरूप को पहचान कर उसके सम्यक समाधान के लिये प्रवृत्त हो, फिर चाहे वह समस्या व्यक्तिगत हो या सामाजिक। जब हमारी प्रज्ञा चेतना में स्थित होकर कार्य करती है तभी हम प्रकृति के वैचित्र्य के उद्गम एकत्व को जान सकते हैं और तब इस तात्विक एकता का ज्ञान ही हमारी विशिष्टता को गलाकर समस्त मानव जाति की सेवा में हमें नियोजित कर सकता है।

हर पथिक का यह दावा होता है कि वह चलता है। यात्रा के लिए कष्ट सहन और साधना के लिए उसकी तत्परता भी उसका प्रमाण है, परन्तु पथिक का सबसे महत्त्वपूर्ण प्रमाण उसकी राह के पीछे रहे हुए वे पदचिह्न हैं, जो समय की बालू रेत पर अनायास ही उभर जाते हैं। वे पदचिह्न नये आने वालों को बतायेंगे कि उनसे पहले कोई इसी मार्ग से अभी गुजरा है और यह भी बतायेंगे कि उन लोगों के चलने का दावा मिथ्या है, जिनसे किसी अनुवर्ती को कोई प्रेरणा ही नहीं मिलती। उन महान साधकों की कहानी कुदरत अपनी ही कलम से लिखती है और ईश्वर स्वयं शिक्षक के रूप में उन लोगों को यह कहानी पढाता है, जिनमें अनुशासन की गहरी रेखाएँ स्पष्ट दिखाई देती है।

- पू. तनसिंहजी

गतांक से आगे

यदुवंशी करौली का इतिहास

– राव शिवराजपाल सिंह इनायती

महाराजा भंवर पाल जी के निसंतान स्वर्गवास होने के बाद परंपरा अनुसार हाड़ौती के राव होने के नाते गद्दी पर पहला अधिकार राव भौम पाल जी का था, सभी जागीरदारों, राज्य के अधिकारियों की सहमति से पॉलिटिकल एजेंट ने भौम पाल जी के राज्याभिषेक की अनुमति दी। इस प्रकार 18 जून, 1866 को जन्मे भौमपाल जी 61 वर्ष की आयु में भाद्रपद कृष्णा नवमी संवत 1984 के दिन करौली के महाराजा बने। कई पीढ़ियों बाद यह पहले राजा थे जिनके पुत्र और पौत्र से भरापूरा परिवार था। राजा बनते ही भौमपाल जी ने राज्य में चल रहे आर्थिक हालात सुधारने पर विशेष ध्यान दिया। उर्दू के साथ ही हिन्दी को भी राजकाज की भाषा बनाया। इन्होंने 1935 में अस्पताल के नए भवन की नींव लगाई जिसका 1938 में उद्घाटन हुआ। आपने भंवर विलास नाम से गणेश गेट के बाहर खुले में नया राजमहल बनवाया, जहाँ वर्तमान में राज परिवार निवास करता है। कैला देवी में भी बैरक तथा अन्य कई भवन बनवाए एवम् करौली एवं कैलादेवी में टेलीफोन सुविधा शुरू की। भौम सागर बाँध का निर्माण भी महाराजा भौम पाल जी ने ही गैरई और गोठरा गाँवों के मध्य में करवाया।

मेयो कॉलेज से अध्ययन कर वापस आने के बाद से ही अधिकांश राज काज महाराज कुमार गणेश पाल ही देख रहे थे, लेकिन 1939 में औपचारिक रूप से भी शासन चलने के सभी अधिकार युवराज गणेशपाल जी को सौंप दिए।

युवराज नई सोच और सख्त व्यवस्था पसंद नौजवान थे, उन्होंने आते ही राज्य की बहुत सारी अब भी चली आ रही फिजूल खर्ची पर रोक लगा दी। कुछ करों आदि में बढ़ोत्तरी के साथ राज्य की आय बढ़ाने के साधनों पर जोर दिया। वन्य उपज आदि से भी बढ़ाई गई, साथ ही पुलिस एवं गणेश गार्ड नाम से सैन्य गारद भी बनवाई जिसे बाकायदा वर्दी एवं नियमित परेड करवाई जाती थी। महाराजा भौम पाल जी का देहावसान अप्रैल, 1947 में हुआ।

इनके देहावसान के बाद राजगद्दी पर युवराज गणेश पाल जी का राज तिलक बैसाख कृष्ण त्रयोदशी संवत 2004 को हुआ, लेकिन मात्र कुछ महीनों के बाद ही देश स्वतंत्र हो गया और महाराजा गणेश पाल जी ने अपने राज्य का विलय भारत सरकार के साथ कर दिया। महाराजा गणेश पाल जी के दो पुत्र हुए, बड़े महाराज कुमार ब्रजेन्द्र जी, जो राजस्थान के प्रथम विधानसभा चुनाव 1952 से 1977 लगातार 25 वर्ष करौली से विधायक रहे, इनका निधन हार्ट अटैक से 9 अगस्त, 1983 को हुआ, इनके कोई संतान नहीं थी। छोटे महाराज कुमार सुरेन्द्र पाल जी राजनीति से दूर एक अलग ही व्यक्तित्व के स्वामी थे, किन्तु अल्पायु में एक सड़क दुर्घटना में 24 मई, 1982 को स्वर्गवास हो गया। इनके दो पुत्रियाँ और एक पुत्र हुए, पुत्र वर्तमान में जदूवंश की करौली गद्दी पर महाराजा गणेश पाल जी के बाद बिराजे। वर्तमान महाराजा कृष्णचंद्र पाल, सरल, सौम्य एवं दूरदर्शी व्यक्तित्व हैं, इनकी जन हित के कार्यों में अनन्य रुचि है और कैलादेवी ट्रस्ट के माध्यम से कैला देवी में विशाल चिकित्सा भवन, अनेक आधुनिक धर्मशालाएँ तथा करौली के मूक बधिर विद्यालय में करोड़ों रुपए के निर्माण कार्य करवाए। इनके ही दिशा निर्देशन में कैला देवी में एक विशाल स्कूल चल रहा है, जो जिले में एक अलग स्थान रखता है। महाराजा कृष्णचंद्र पाल जी के एक पुत्र और एक पुत्री के साथ नाती पोतों का भरा पूरा परिवार है। युवराज विवस्वत पाल जी अत्यन्त उत्कृष्ट चित्रकार हैं जिनकी शिक्षा मेयो कॉलेज और लंदन से हुई है। ●

गीता एक धर्मशास्त्र

– धर्मेन्द्रसिंह आंबली

धर्म 'धृ' धातु से आया शब्द है। धृ का मतलब है धारण करना। सारी सृष्टि का निर्माण, पालन एवं संहार सब मिलकर जड़ और चेतन स्वरूप में परमात्म तत्व ने धारण कर रखा है। परमात्मा एक है फिर चाहे हम उसे ईश्वर, अल्लाह, राम, पैगम्बर, फरिश्ता, कुछ भी उपनाम दें। ओम् इति अक्षर: ब्रह्म के मुताबिक ओम् ब्रह्म का परिचायक शब्द है। वेद अपौरुषेय हैं। ईश्वर की ओर से सुनी हुई वाणी मनिषियों ने अपनी स्मृति में धारण की तब स्मृतियाँ बनीं। और वेदव्यास जी द्वारा लिखित समग्र जीव मात्र के कल्याण की पुस्तकें बनीं वे हैं वेद। वेदों का सार है उपनिषद् और वेद तथा उपनिषदों का दोहन करके सर्वोत्कृष्ट शास्त्र बना भगवान श्री पद्मनाभ के मुख से नि:सृत वाणी, वह है मानव ही नहीं, जीवमात्र का कल्याण करने वाला शास्त्र 'श्रीमद्भगवद्गीता'।

'एकं शास्त्रं देवकी पुत्र गीतम्' देवकी पुत्र भगवान श्री कृष्ण के मुख से नि:सृत वाणी ही गीता है और वह जीवमात्र के लिए शास्त्र है। परमात्मा ने कहा है, वही गीत गीता है। इसीलिए भगवान वेदव्यास कहते हैं–

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यै: शास्त्र संग्रहै।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुख पद्माद्रिनि:सृता।।

अर्थात् गीता भली प्रकार मनन करके हृदय में धारण करने योग्य है, जो पद्मनाम भगवान के श्रीमुख से नि:सृत वाणी है, फिर अन्य शास्त्रों के संग्रह की क्या आवश्यकता? गीता वह शास्त्र है जिसमें देश, काल, परिस्थिति निरपेक्ष ज्ञान है। चाहे भारत हो या अमेरिका, चाहे ठंड हो या गर्मी, चाहे गोरा हो या काला, चाहे ऊँचा हो या नीचा, गरीब हो या धनी, पशु, पक्षी, जड़ व चेतन (चराचर) सभी पर गीता ज्ञान लागू होता है। गीता मजहब मुक्त है, देश, काल, परिस्थिति निरपेक्ष है। क्योंकि परमात्मा एक है और समग्र सृष्टि-जड़ और चेतन, उन्हीं के अंश हैं– **'ममैवांशो जीवलोके जीवभूत: सनातन:'**।

भगवान श्रीकृष्ण द्वारा नि:सृत गीता समग्र जीव के लिये गीत है। गाने जैसा यह एक ही गीत है। इसीलिए कहते हैं कि हमारे श्वासों में सहज प्रवाहित हो जाए वैस ऊँ, राम, शिव का जप ही वह गीत है। मनुष्य को अंग, उपांगों के साथ विवेक-बुद्धि भी दी है कि वह नियतकर्म (जप, यज्ञ) करते-करते जीव को शिव में, आत्मा को परमात्मा में विलीन कर दे। इससे अच्छा कोई गीत दुनिया में नहीं है। इसीलिए नारद 'नाद रंध्र सह' नारायण जाप जपते-जपते महर्षि बन गये। ऐसे ही अनेकों संत ईश्वरीय पद पा गये। यहाँ नारद कोई चोटीवाला, वीणाधारी व्यक्ति नहीं है। धरती पर अवतरित सभी मनुष्यों का उत्तरदायित्व है कि वे अपने जीवन में नाद रंध्र सहित वीणा बजाकर ईश्वर प्राप्ति करें। ईश्वर हमें जो करने को कहते हैं, उस क्रिया को पूर्ण करने के लिए साधन भी उपलब्ध पहले करवा देते हैं। बाद में वह काम करने को कहते हैं। इस संदर्भ में हमें 'नारद' और वीणा के बारे में समझना पड़ेगा।

नारद, ना रद, मतलब है कभी रद न होने वाला। रद वही होता है जो नाशवंत हो। हम (संपूर्ण संसार) परिवर्तनशील हैं, हमारा आकार, देह, संस्कार बदलते हैं लेकिन आत्मा अविनाशी है। अजर, अमर है। इसलिए हमारे जीवन में हमारा एक ही नाद (स्वर) ईश्वर में नहीं जुड़ता तब तक हम नारद नहीं हैं। रही

बात वीणा की। सामान्यतया वीणा दो तूमड़े की बनी होती है। एक बड़ा और एक छोटा तूमड़ा तथा बीच में कुछ तार बँधे होते हैं। उन तारों को अलग-अलग तरह से दबाने पर वीणा मधुर स्वर देती है।

हम कहते हैं कि हमारे पास वीणा नहीं है, तो 'नारद' कैसे बनें। यह भूल हमारी समझ की है, हमारी अवलोकन शक्ति की कमी की है। भगवान ऐसी भूल नहीं करते। वीणा के रूप में भगवान ने हमको एक पेट और एक मस्तिष्क के रूप में बड़ी-छोटी तूमड़ी दी है। दोनों के बीच गले में स्वर पेटी के रूप में तार दिए हैं। उसको जितना झनझनाया जाता है, उतना ही स्वर बजता है। इस गले में रही स्वरपेटी से सदैव नाद रंध्र से नारायण शब्द बजता रहे तो हम भी नारद और हमारी वीणा से सदैव नारायण-नारायण नाद निकलेगा। सभी जीव अपना कल्याण इस गीता रूपी गीत को गाकर कर सकते हैं। गीता का सार ही भगवान का गीत है। इस गीत को मनुष्य सुबह-शाम, अंधेरे-उजाले, दिन-रात, खाते-पीते, नहाते कभी भी गा सकता है। इस गीत के लिए पढाई होना, नौकरी करना, व्यापार करना ये कुछ भी जरूरी शर्त नहीं है। प्रत्येक मनुष्य गा सकता है और गाने के लिये सभी को वीणा दी गई है। फिर हम नारद न बनें तो भूल हमारी है न कि ईश्वर की।

जो मनुष्य धन, दौलत, पत्नी, पुत्र, गाडी, बंगला, रूप, पद, प्रतिष्ठा के अहंकार रूप तार को ज्यादा खींच लेता है तो तार (भगवद् सम्पर्क) टूट जाता है। आलस्य, निद्रा, प्रमाद के रूप में तार ढीले रह गये तो वीणा का स्वर भद्दा निकलेगा। तब भी नारद नहीं बन सकेंगे। 'नारद' नाद-रंध्र से सदैव बजता रहे तब वीणा सदैव बजती रहेगी। तभी गीत सुनाई देता रहेगा और एक दिन-गीतों में बांसुरियां घुल जायेगी।

ऐसा गीत बनाया है जिसे कोई भी सरलता से गा सकता है। 'ओम्' कहने में कौनसी दिक्कत है? उसमें कोई धन, पढ़ाई, होशियारी नहीं चाहिए। चाहिए सिर्फ वीणा में तल्लीनता। जिसकी वीणा से जीवन भर गीत बजता रहेगा, वह पार हो जाएगा। हर एक जीव चौरासी लाख योनि पार करके मनुष्य जन्म पाकर यह गीत गाते-गाते शिव में और आत्मा परमात्मा में विलीन कर सकता है। इसीलिए गीता जीव मात्र की धर्मशास्त्र कही गई है। यह जानने से पूर्व मानने और गा लेने का विषय है।

●

हवा का एक झौंका आता है और हमें अस्त-व्यस्त कर डालता है। पर क्या सच नहीं, कि हमें अस्त-व्यस्त करने के साथ वह झौंका स्वयं भी अस्त-व्यस्त हो जाता है? इस प्रकार झौंके चलते हैं और लगातार चलने पर वही हवा की गति बन जाते हैं। ऐसी ही निरन्तर गति से चलने वाली हवा के द्वारा बन्द किये हुए द्वार खुल जाते हैं और उनमें हवा की गति से भी तेज हमारी आँखें और चित्त की वृत्तियाँ घुस जाती हैं। भीतर जाकर हम बाहर से दिखने वाले पहाड़, गहराई से और सांगोपांग दृष्टि से देख पाते हैं। मनुष्य की पहचान ऐसे ही झौंकों के समय हुआ करती है। अन्यथा यह एक ऐसा किला है, जिसका यदि द्वार किलेदार स्वयं न खोले तो उसे खोलने के लिए बड़े तेज तूफानों की जरूरत रहती है।

– पू. तनसिंहजी

जीवन-सुधार

- जयदयाल गोयन्दका

मनुष्य को अपना जीवन सदाचारमय बनाना चाहिए। यह मानव-जीवन बड़ा ही अमूल्य है। मनुष्य को चाहिये कि वह अपना सब प्रकार से उत्थान करे और पतन के मार्ग में तो कभी भूलकर भी पैर न रखे। भगवान् गीता में कहते हैं -

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः।। (6/5)

'अपने द्वारा अपना संसार-समुद्र से उद्धार करे और अपने को अधोगति में न डाले; क्योंकि यह मनुष्य आप ही तो अपना मित्र है और आप ही अपना शत्रु है।'

परन्तु आजकल अधिकतर पतन की ओर ही प्रवृत्ति होती जा रही है। नैतिक, सामाजिक और धार्मिक-सभी दृष्टियों से हमारा उत्तरोत्तर पतन होता जा रहा है, और वर्तमान काल में तो बहुत ही पतन हो गया है। लोगों में झूठ, कपट, चोरी, बेईमानी और चोरबाजारी इतनी बढ़ गयी है कि प्रतिशत एक व्यक्ति भी शायद ही इससे अछूता रहा हो।

परन्तु जो मनुष्य अन्याय से धनोपार्जन करता है, वह न तो जीते-जी उस धन का भोग ही कर सकता है और न उसे पुण्य-दान में ही लगा सकता है; क्योंकि पाप से पैदा किये हुए द्रव्य का पुण्य में लगना असम्भव-सा है, वह तो अधिकांश में पाप में ही लगता है। बबूल के वृक्ष में तो काँटे ही लगते हैं, उसमें आम कहाँ? अत: पाप से उपार्जित द्रव्य से न इस लोक में लाभ है और न परलोक में ही। वह धन या तो मुकमदेबाजी में लगकर नष्ट हो जाता है या किसी कारण से सरकार के अधिकार में चला जाता है अथवा चोर-डाकुओं के हाथों में पड़कर पूरा हो जाता है। यदि रहता भी है तो प्राय: उसका दुरुपयोग ही होता है। इसलिये अन्याय से कभी पैसा पैदा नहीं करना चाहिये। न्यायोपार्जित द्रव्य से खाने के लिए एक मुट्ठी चना ही मिले तो वह भी मेवा-मिष्ठानों से बढ़कर है। यदि अन्याय से मेवा-मिष्ठान भी मिले तो उन्हें विष के समान समझना चाहिये। शरीर का निर्वाह ही तो करना है। वह तो मेवा-मिष्ठान से भी होता है और चनों से भी हो सकता है। हम यदि चने-बाजरे की रोटी खा लें तो क्या और मेवा-मिष्ठान खा लें तो क्या, आखिर तो सब चीजों की एक ही गति होनी है। अत: मनुष्य को इन सब बातों को विचार कर अन्याय का कभी आश्रय नहीं लेना चाहिए तथा अपना जीवन सब तरह से सुधार कर पवित्र बनाना चाहिये।

समाज में इस समय बहुत सी कुरीतियाँ बढ़ी हैं, उनका भी सुधार करना चाहिये तथा जो फिजूलखर्ची बढ़ी हुई है, उसे घटाने की कोशिश करनी चाहिए।

दहेज की प्रथा तो बिल्कुल ही तोड़ देनी चाहिये; यदि बिल्कुल न टूट सके तो बहुत संक्षिप्त, केवल नाममात्र की रखनी चाहिये। दहेज लेना एक बहुत ही निन्दनीय कर्म है। दहेज न दे सकने के कारण बहुत से गरीब भाई दुखी और संतप्त हो रहे हैं। इसलिये बहुत-सी लड़कियाँ तो अपने माता-पिता के इस दु:ख को देखकर आत्महत्या कर लेती हैं और बहुत-से माता-पिता भी यदि लड़की बीमार हो जाती है तो उसके मरने की ही बाट देखते हैं तथा मरने पर बाहर से शोक प्रकट करते हुए भी भीतर से प्रसन्न ही होते हैं। उनकी आत्महत्या और मृत्यु के पाप का भागी दहेज लेने वाला ही होता है। दहेज लेने वाले को कोई विशेष लाभ भी नहीं होता; क्योंकि जो दहेज लेता है,

उसे भी कभी देना ही पड़ता है। वह तो दहेज लेकर केवल अपयश और पाप का ही भागी बनता है। इसलिये दहेज को एक प्रतिग्रह के समान समझकर अथवा रक्त से सना हुआ द्रव्य मानकर उसका बिल्कुल त्याग कर देना चाहिए।

मनुष्य को ब्रह्मचर्य के पालन पर विशेष ध्यान देना चाहिये। शरीर में वीर्य ही एक प्रधान सार वस्तु है, इसकी सब प्रकार से रक्षा करनी चाहिये। इसके नाश से मनुष्य के बल, बुद्धि, आयु, तेज और ओज का ह्रास होकर उसका यह लोक तथा परलोक दोनों बिगड़ जाते हैं और इसके संरक्षण से बल, बुद्धि, तेज एवं ओज की वृद्धि होकर उसके दोनों लोक सुधर जाते हैं। इसलिये परस्त्री के दर्शन, चिन्तन, स्पर्श का तो त्याग कर ही देना चाहिए; यदि किसी कार्य से आवश्यक बात करनी पड़े तो नीची दृष्टि रखकर माता-बहिन समझते हुए ही सम्भाषण करना चाहिये। लड़के-लड़कियों का स्पर्श तथा चुम्बन भी कभी नहीं करना चाहिये तथा ऐश-आराम भोग की वस्तुओं को, शृंगार-शौकीनी को इस विषय में खतरनाक जानकर इनसे बहुत ही दूर रहना चाहिये।

इसी प्रकार सत्य के पालन पर भी खूब ध्यान देना चाहिये। आजकल लोग सत्य का महत्त्व भूल गये हैं। मनुष्य को चाहिये कि वह सत्य का महत्त्व समझे और उसका दृढ़ता से पालन करे। महर्षि पतञ्जलि कहते हैं -

सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम्। (यो. 2/36)

भाव यह है कि सत्य की प्रतिष्ठा होने पर मनुष्य जो कुछ कह देता है, वही सत्य हो जाता है। अर्थात् जो आदमी कभी झूठ नहीं बोलता, वह किसी को यदि कुछ शाप, वरदान या आशीर्वाद दे देता है तो वह सिद्ध हो जाता है। श्रुति-स्मृति, इतिहास-पुराणों में इसके जगह-जगह उदाहरण मिलते हैं।

बृहदारण्यकोपनिषद् में कथा आती है कि शकल के पुत्र शाकल्य ने याज्ञवल्क्य से कई इधर-उधर के प्रश्न किये। अन्त में याज्ञवल्क्य ने उससे कहा कि 'अब मैं तुझसे एक बात पूछता हूँ; तू यदि उसका उत्तर नहीं दे सकेगा तो तेरा मस्तक कट जाएगा। शाकल्य उत्तर नहीं दे सका और उसका मस्तक धड़ से अलग हो गया (3/9/26)।

श्रीमद्भागवत में आता है कि एक बार राजा परीक्षित ने शमीक ऋषि के गले में मरा हुआ साँप डाल दिया, इससे कुपित होकर ऋषिकुमार शृङ्गी ने राजा को शाप दे दिया कि 'आज से सातवें दिन राजा को तक्षक सर्प डस जाएगा।' उनका यह वचन सर्वथा सत्य सिद्ध हुआ (प्रथम स्कन्ध, अध्याय 18)।

महाभारत की कथा है कि यमराज ने सावित्री को यह वरदान दिया कि तुम्हारे एक सौ पुत्र होंगे। उसके अनुसार सावित्री के एक सौ पुत्र हुए (वनपर्व, अध्याय 297/299)। राजा शान्तनु ने अपने पुत्र भीष्म को यह आशीर्वाद दिया कि 'तुमको मृत्यु नहीं मार सकेगी, तुम इच्छामृत्यु होओगे' और वास्तव में ऐसा ही हुआ (आदिपर्व, अध्याय 100; अनुशासन पर्व, अध्याय 167/168)।

इसी तरह शास्त्रों में अनेक दृष्टान्त मिलते हैं। इसलिये मनुष्य को सत्य के पालन में खूब दृढ़ रहना चाहिये। किन्तु सत्य ऐसा होना चाहिये कि जिसमें न कपट हो और न हिंसा ही हो; वही असली सत्य है।

महाभारत, द्रोणपर्व के 190वें अध्याय में आया है कि एक बार द्रोणाचार्य ने राजा युधिष्ठिर से पूछा कि 'मेरा पुत्र अश्वथामा मारा गया या नहीं?' इसके उत्तर में युधिष्ठिर ने कहा कि 'अश्वथामा मारा गया, पर हाथी मारा गया।' इस वाक्य में उन्होंने 'हाथी मारा गया' ये शब्द धीरे से कहे। एक दोष के कारण ऐसे सत्यवादी राजा युधिष्ठिर के भी ये वचन सत्य नहीं समझे गये।

इसी प्रकार महाभारत, कर्णपर्व के 69वें अध्याय में यह कथा आती है कि एक बार कुछ मनुष्य चोर-डाकुओं के डर से जंगल की ओर भाग गये। उस रास्ते में एक सत्यवादी मुनि निवास करते थे। थोड़ी ही देर में जब चोर-डाकू वहाँ आये तब उन्होंने उन मनुष्यों का पता न पाकर उन मुनि से पूछा कि 'वे मनुष्य किधर गये हैं।' मुनि ने सत्य बात बता दी कि 'वे इस सघन वन में घुसे हैं।' इससे चोर-डाकुओं ने उसी रास्ते से जाकर उन मनुष्यों को पकड़ लिया और मार डाला। इस हत्या का दोष उन मुनि को लगा।

इसलिये जिसमें न कपट हो और न हिंसा हो, वही असली सत्य है। ऐसे सत्य की ही शास्त्रों में महिमा गायी है।

यह तो सत्य वचन की बात हुई। फिर जिसका व्यवहार भी सत्य हो और भाव भी सत्य हो, उसकी तो बात ही क्या है; क्योंकि सद्व्यवहार और सद्भाव से परामात्मा की प्राप्ति की जाती है। यज्ञ, दान, तप आदि जो उत्तम कर्म हैं, और जो उत्तम भाव हैं तथा जो भगवदर्थ कर्म हैं; वे सब सत्यस्वरूप परमात्मा की प्राप्ति कराने वाले होने से 'सत्' कहे जाते हैं। गीता में श्री भगवान ने कहा है -

सद्भावे साधुभावे च सदित्येतत्प्रयुज्यते।
प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते।।
यज्ञे तपसि दाने च स्थितिः सदिति चोच्यते।
कर्म चैव तदर्थीयं सदित्येवाभिधीयते।।

(17/26-27)

'सत्' इस प्रकार यह परमात्मा का नाम सत्य भाव में और श्रेष्ठ भाव में प्रयोग किया जाता है तथा हे पार्थ! उत्तम कर्म में 'सत्' शब्द का प्रयोग किया जाता है तथा यज्ञ, तप और दान में जो स्थिति है, वह भी 'सत्' इस प्रकार कही जाती है और उस परमात्मा के लिये किया हुआ कर्म निश्चयपूर्वक 'सत्' ऐसे कहा जाता है।

इतना ही नहीं, वास्तव में 'सत्' साक्षात् भगवान् का स्वरूप ही है। इसलिये भगवान् के नामों में 'सत्' भगवान् का एक नाम है। भगवान् कहते हैं -

ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः।
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा।।

(गीता 17/23)

'ॐ तत्, सत्-ऐसे यह तीन प्रकार का सच्चिदानन्दघन ब्रह्म का नाम कहा है; उसी से सृष्टि के आदिकाल में ब्राह्मण और वेद तथा यज्ञादि रचे गये।' श्रुति भी कहती है-

सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म। (तैत्ति. 2/1/1)

'(ब्रह्म, सत्य, ज्ञानस्वरूप और अनन्त है।'

इसलिये सत्य का सेवन भगवान का सेवन है, सत्य की उपासना भगवान की उपासना है और सत्य का आश्रय भगवान का आश्रय है। मनुष्य को चाहिये कि वह सत्य को अपना जीवन, प्राण और साक्षात् परमात्मा का स्वरूप समझकर मनसा-वाचा-कर्मणा उसका पालन करे। आचरण भी सत् बनाना चाहिये। जिसको हम सदाचार कहते हैं, उसी को उत्तम कर्म तथा सद्व्यवहार कहते हैं। वाणी भी सत्य ही होनी चाहिये। हिंसा और कपट से रहित यथार्थ भाषण ही सत्य वाणी है तथा भाव भी सत्य ही होना चाहिये। जिसको हम उत्तम नीयत कहते हैं, उसका नाम सद्भाव है। समता, संतोष, शान्ति, सरलता आदि जितने भी परमात्मा की प्राप्ति में सहायक, दैवी-सम्पदा के सात्त्विक सद्गुण हैं, वे सभी सद्भाव हैं। वे परमात्मा की प्राप्ति में सहायक होने के कारण तत्परता से धारण करने योग्य हैं। अतः हमको भारी-से-भारी आपित्त पड़ने पर भी सत्य का कभी त्याग नहीं करना चाहिये।

कल्याण चाहने वाले मनुष्य को उचित है कि चराचर जीवमात्र को परमात्मा का स्वरूप समझकर अपने तन, मन, धन से उनकी सेवा करे। इस प्रकार जो सेवा करता है, वह भगवान का सच्चा भक्त है। भगवान ने गीता में कहा है-

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः।।

(18/43)

'जिस परमेश्वर से संपूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति हुई है और जिससे यह समस्त जगत् व्याप्त है, उस परमेश्वर की अपने स्वाभाविक कर्मों द्वारा पूजा करके मनुष्य परम सिद्धि को प्राप्त हो जाता है।'

अभिप्राय यह है कि परमात्मा सर्वव्यापक हैं, सबमें विराजमान हैं। इसलिये आचरण के द्वारा सबकी सेवा करना भगवान की सेवा है। अतः चराचर प्राणिमात्र को नारायण का स्वरूप समझकर श्रद्धा, भक्ति और आदर के साथ मन, वाणी और क्रिया से तत्परतापूर्वक उनकी सेवा करनी चाहिये। मन से सबका हित-चिन्तन करना मन के द्वारा सेवा करना है। जिससे सबका हित हो, ऐसा सत्य और प्रिय वचन बोलना वाणी के द्वारा सेवा करना है और शरीर-इन्द्रिय द्वारा सेवा करना क्रिया से सेवा करना है। सदा मन में यह भाव रखना चाहिये कि हमारा तन, मन, धन, वाणी, मन-सब जगत्-रूप जनार्दन की सेवा के लिये है। इस भाव से जगज्जनार्दन की सेवा करना ही उनकी अनन्य भक्ति है। तुलसीकृत रामायण में भगवान श्रीरामचन्द्र जी हनुमान जी से भेंट होते समय कहते हैं-

सो अनन्य जाकें असि मति न टरइ हुनमंत।
मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत।।

(किष्किन्धा काण्ड)

'हे हनुमान्! अनन्य भक्त वही है, जिसकी ऐसी बुद्धि कभी नहीं टलती कि मैं सेवक हूँ और यह चराचर (जड़-चेतन) जगत् मेरे स्वामी भगवान का रूप है।'

भगवान् ही सबके उपादान तथा निमित्त कारण हैं, इसलिये सबकी सेवा भगवान की सेवा है। मनुष्य को प्रत्येक क्रिया में भगवद्भाव रखना चाहिये। हवन करते समय यह समझना चाहिये कि मैं जो अग्नि में आहुति दे रहा हूँ, इसको स्वयं भगवान ही भोग लगा रहे हैं। इसी प्रकार गौ को घास खिलाते समय यह समझना चाहिये कि भगवान ही गौ के रूप में घास खा रहे हैं; वृक्षों में पानी देते समय समझना चाहिये कि भगवान ही वृक्ष के रूप में जल पी रहे हैं; अतिथि-अभ्यागत को भोजन कराते समय यह समझना चाहिये कि भगवान ही इस रूप में आकर भोजन कर रहे हैं। इस प्रकार स्थावर-जङ्गम यावन्मात्र प्राणियों में भगवद्बुद्धि करके उपर्युक्त विधि से उनकी सेवा करनी चाहिये। इस तरह जो सबको अपना इष्टदेव समझकर सबके हित में रत रहता है, वह भगवान को ही प्राप्त होता है। भगवान गीता में कहते हैं -

ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः।

(12/4)

जो ऐसा समझता है, उससे किसी का किंचिन्मात्र भी कभी अहित तो हो ही नहीं सकता। भला बताइये, वह मनुष्य मन, वाणी या शरीर से किसी प्रकार से भी कभी किसी को जरा भी कष्ट दे सकता है? कभी नहीं। क्योंकि उसकी तो सबमें भगवद्बुद्धि हो जाती है और इसके फलस्वरूप उसकी वह स्थिति हो जाती है, जो कि भगवान ने गीता में इस श्लोक से व्यक्त की है-

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः।।

(7/19)

'बहुत जन्मों के अन्त के जन्म में तत्त्वज्ञान को प्राप्त पुरुष, 'सब कुछ वासुदेव ही है'-इस प्रकार मुझको भजता है, वह महात्मा अत्यन्त दुर्लभ है।'

इसलिये मनुष्य को इस प्रकार की स्थिति प्राप्त करने के लिये सब प्रकार से स्वार्थ का त्याग करके कटिबद्ध हो जाना चाहिये। वास्तव में स्वार्थ ही मनुष्य को इससे वंचित रखने वाला है। स्वार्थ से ही उपर्युक्त दोष आते हैं अर्थात् स्वार्थ ही समस्त दोषों की जड़

है। इसका नाश हो जाने पर स्वत: ही संपूर्ण दोषों की निवृत्ति हो जाती है। अत: दूसरों के साथ या स्वजनों के साथ भी जो अपना स्वार्थ का भाव है, उसे सर्वथा हटाकर सब प्रकार से सबके हित में रत रहना चाहिये। इस प्रकार प्रत्येक क्रिया, पदार्थ और प्राणी के साथ किसी भी प्रकार का स्वार्थसिद्धि का भाव न रखकर सदा नि:स्वार्थभाव से सबकी सेवा करनी चाहिये। नि:स्वार्थ सेवा करने वाले को ये दो वशीकरण मंत्र सदा याद रखने चाहिये। एक तो यह कि दूसरों के गुण गावे, अवगुण नहीं; और दूसरा यह कि दूसरे के हित की सदा चेष्टा रखे। ऐसा आचरण करने से सब लोग उसके अनुकूल हो जाते हैं और उसका परमार्थ भी सिद्ध हो जाता है।

अतएव हम लोगों को उपर्युक्त बातों पर ध्यान देना चाहिये और भारी-से-भारी आपत्ति पड़ने पर भी कभी काम, क्रोध, लोभ, मोह, स्वार्थ या भय के वशीभूत होकर अपने धर्म का त्याग नहीं करना चाहिये; क्योंकि ये सब सांसारिक पदार्थ एवं जीवन क्षणिक है और धर्म तथा धर्म के साथ जो सम्बन्ध है, वह नित्य है। बुद्धिमान पुरुष को अनित्य वस्तु के लिये नित्य वस्तु का कभी त्याग नहीं करना चाहिये। याद रखना चाहिये कि मरने के बाद धन, ऐश्वर्य, कुटुम्ब की तो बात ही क्या है, आपका यह शरीर भी आपके साथ जाने का नहीं। जिन वस्तुओं के लिये आप नाना प्रकार के पाप करते हैं, वे तो आपकी जीते-जी भी मदद नहीं कर सकतीं, फिर मरने के बाद की तो बात ही क्या? आपको विचार करना चाहिये कि यह मनुष्य-जीवन बहुत ही स्वल्प है, पर है बहुत ही मूल्यवान, इसलिये मनुष्य जन्म पाकर भोग-विलास, ऐश-आराम में अपना जीवन वृथा नहीं गँवाना चाहिये; बल्कि मन, इन्द्रियों का संयम करके परोपकार और ईश्वर भक्ति में बिताना चाहिये, जिससे आत्मा का कल्याण हो। गीता में भी भगवान कहते हैं -

अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम्।।

(9/33)

'इसलिये तू सुख रहित और क्षणभंगुर इस मनुष्य-शरीर को प्राप्त होकर निरंतर मेरा ही भजन कर।'

ईश्वर हैं, ध्रुव हैं। वे चेतन हैं, जड़ नहीं। वे सत्य, धर्म और न्याय के पोषक हैं। जहाँ सत्य, धर्म, न्याय और नीति है, वहीं परमात्मा प्रत्यक्ष है। ऐसा दृढ़ निश्चय करके नीति, धर्म और सत्य का कभी परित्याग नहीं करना चाहिये और उस सर्वशक्तिमान परमात्मा पर निर्भर रहना चाहिये, जिस प्रकार कि एक छोटा बच्चा अपने माता-पिता पर निर्भर रहता है। बच्चा अपने लिये कुछ भी चिन्ता-शोक नहीं करता, माता-पिता ही उसकी सारी सार-सँभाल रखते हैं और पालन करते हैं; इसी प्रकार वे परमात्मा हमारी रक्षा करते आये हैं और करेंगे-ऐसा अटूट विश्वास रखकर सर्वथा निश्चिन्त होकर उस ईश्वर के बल पर निर्भर रहना चाहिए। इसी में हमारा सब प्रकार से कल्याण है। ●

कष्ट होता है

कर्ज लेते समय तो राहत मालूम होती है, पर लौटाते समय कष्ट होता है; दुष्ट के साथ मित्रता करते समय शुरू में तो अच्छा लगता है पर बाद में कष्ट होता है। मन में उठी गलत और हानिकारक कामना को पूरा करते समय तो मजा आता है, पर जब इसका परिणाम सामने आता है, तब कष्ट होता है। बिना आगा-पीछा और भला-बुरा सोचे कोई काम करना तो आसान होता है पर इसका फल भोगने में कष्ट होता है।

गतांक से आगे

महान क्रान्तिकारी राव गोपालसिंह खरवा

– भँवरसिंह मांडासी

राव गोपालसिंह नजरबन्द :– जून, 1915 ई. में ए.जी.जी. राजपूताना के आदेश से राव गोपालसिंह को टॉडगढ़ के सुदूर पहाड़ी स्थान पर नजर–कैद किया गया, तब उन्हें अपने कुछ सेवकों और विश्वस्त साथियों को अपने पास रखने की सुविधा प्रदान की गई थी। उसी आदेश के अनुसार मोड़सिंह भवानीपुरा, सेक्रेट्री भूपसिंह, सवाईसिंह मेड़तिया आदि कुछ विश्वस्त लोग उनके साथ टॉडगढ़ गए थे। उसी काल में लाहौर षड़यंत्र केस में पकड़े गए एक व्यक्ति ने अपने बयानों में भूपसिंह से मिलने एवं उसके द्वारा खरवा से बन्दूकें एवं कारतूस प्राप्त करने की बात कही थी। उसी बयान के आधार पर अजमेर से एक पुलिस इन्सपेक्टर भूपसिंह से पूछताछ करने टॉडगढ़ पहुँचने वाला था। राव साहब कोअपने अन्य सूत्रों से पुलिस इन्सपेक्टर के टॉडगढ़ आकर भूपसिंह के बयान लेने की सूचना मिल चुकी थी। अत: उनके पहुँचने से पूर्व ही उसी रात को भूपसिंह को वहाँ से निकालकर मेवाड़ के पहाड़ी क्षेत्र में छिपनेऔर पनाह लेने को भेज दिया था।

भूपसिंह ही विजयसिंह पथिक :– जून 1915 के पश्चात फरार भूपसिंह 'विजयसिंह पथिक' के नाम से प्रकट हुआ और तब वह मेवाड़ के बिजोलिया ठिकाने के किसान आन्दोलन के अग्रणी नेता के रूप में जनता के सामने आया। किसान आन्दोलन में प्राप्त सफलता ने उसे किसान नेता और जन–नेता के सर्वोच्च पद पर प्रतिष्ठित कर दिया। बिजोलिया किसान आन्दोलन के सम्बन्ध में श्री भंवरलाल पाण्डेय ने 'सोलारी सही' और श्री शंकर सहाय सक्सेना ने 'पथिक' नामक पुस्तक लिखी है।

क्रान्ति की तैयारियाँ :– जयपुर के अर्जुनलाल सेठी की ''अभिनव भारत समिति'' के युवक एवं बारहठ केशरीसिंह की ''वीर भारत सभा'' के कोटा में रहने वाले कार्यकर्ता अपने अलग–अलग कार्य क्षेत्रों में कार्य करते हुए भी परस्पर सम्पर्क बनाए हुए थे। दिल्ली और पंजाब के क्रान्तिकारियों का अलग संगठन था। उत्तरप्रदेश और बिहार के क्रान्तिकारी बंगाल की ''बंग अनुशीलन समिति'' से जुड़े हुए थे। उक्त संगठन के प्रमुख सूत्रधार रासबिहारी बोस और शच्चिन्द्रनाथ सान्याल इस प्रयत्न में लगे हुए थे कि उत्तरी भारत के समस्त क्रान्तिकारी संगठनों को संयुक्त बनाकर एक अधिक शक्तिशाली संगठन के रूप में कार्य संचालन किया जावे, ताकि संगठन की शक्ति और एकरूपता बनी रहे। उन क्रान्ति नेताओं का उक्त प्रयास कहाँ तक सफल हुआ, कहना कठिन है।

राव गोपालसिंह अंग्रेजों के विरुद्ध विप्लव की जो तैयारियाँ कर रहे थे उसकी कार्यविधि और अन्य क्रान्तिकारियों की कार्यविधि में मूलभूत अन्तर था। उत्तर भारत के बंगाल, बिहार, संयुक्त प्रान्त आदि प्रान्तों के क्रान्तिकारी युवक, देश–प्रेम के आवेश में मतवाले बने साहसिक कार्यों में प्राणों की बाजी लगाने को हरदम तत्पर बने रहते थे। बमों के धमाके, गुप्त डाकेजनी एवं हत्याओं से आतंक फैलाने के कार्य में वे लगे हुए थे। लेकिन स्वभावजन्य संस्कारों के कारण उनमें से अधिकांश युवक युद्ध–क्षेत्र के सैनिक नहीं थे। इसके विपरीत राव साहब के अनुयायी अधिकांश क्रान्तिकारी उन सैनिक जातियों में से थे जो जन्मजात योद्धाओं के गुण रखते थे। तलवार, बन्दूक चलाने, घोड़े–ऊँटों की पीठ पर सवार होकर कठिन लम्बे मार्ग पार करने, बियावान घोर जंगलों में अकेले घूमने–

फिरने आदि गुण उन्हें विरासत में मिले थे। भूख-प्यास एवं सर्दी-गर्मी की सहन क्षमता और शत्रु पर प्रहार करके कुशलतापूर्वक निकल जाने की कला में अपने समकालीन अन्य क्रान्ति-कारियों की अपेक्षा वे अधिक श्रेष्ठ थे।

राजपूताना में उस समय शस्त्र कानून लागू नहीं था। खुले आम तलवार बन्दूक लेकर चलने में कोई रुकावट नहीं थी। उत्तम दर्जे की बन्दूकें, तोप, कारतूस और बारूद रखने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं था। देशी राज्यों की सेनाएँ उनके भाई-बेटों को भरती करके बनाई जाती थी। सैनिक शिविरों में प्रवेश पाना एवं देशहित में क्रान्ति विचारों का उनमें प्रचार करना क्रान्ति कर्मा राजपूतों, चारणों और पुरोहितों के लिए आसान काम था।

मगरा-मेरवाड़ा के पार्वत्य क्षेत्र के निवासी राजपूत, रावत, मेहरात और गुजर जन्मजात योद्धा और युद्धप्रिय प्रवृति के लोग थे। अचानक छापा मारने और पहाड़ों की घाटियों में छिपकर अपने को बचा लेने की कला में वे पारंगत माने जाते थे। क्रान्ति सदैव छापामार युद्धों से ही सफल होती है। राजपूताना के इस मगरा क्षेत्र के लोग छापामार युद्धों के लिए अति उपयुक्त सैनिक साबित हो सकते थे। सन् 1857 ई. तक मेरवाड़ा के रावत, मेहरातों ने अंग्रेजों को आसानी से यहाँ पर शान्ति व्यवस्था स्थापित नहीं करने दी थी। ऐसे सधे-सधाए जन्मजात छापामार-योद्धा अन्य प्रान्तों के क्रान्तिकारियों में मिलने कठिन थे।

जोधपुर के राठौड़ अपनी घुड़सवार सेना की श्रेष्ठता के लिए भारत में इतिहास प्रसिद्ध रहे हैं। मुगल और मराठा काल में जोधपुर के अश्वारूढ़ रिसालों के तूफानी आक्रमणों की प्रशंसा करते हुए अंग्रेज लेखक एच. क्रॉम्पटन ने लिखा है -

"Never yet in the History of battle, had footmen dared to oppose the might of marwar mounted horeses."

सन् 1914 ई. में लड़े जा रहे प्रथम महायुद्ध में जोधपुर रिसाले की भूमिका उल्लेखनीय मानी गई थी। सर प्रताप द्वारा संगठित राठौड़ घुड़सवार सैनिक पदाधिकारी राव गोपालसिंह द्वारा देशहित में किये जा रहे कार्यों के प्रशंसक एवं समर्थक थे। उक्त रिसाले की सेवा से निवृत होने पर अनेक सैनिक राव गोपालसिंह के पास खरवा आकर रह गए थे। उनमें महेचा बलवन्तसिंह बालोतरा जिला बाड़मेर, उदावत गाड़सिंह ग्राम डेह नागौर, मेड़तिया सवाईसिंह गाँव ततारपुरा, मेड़तिया बख्तावरसिंह गाँव मालावास परगना परबतसर, जोधा चन्द्रसिंह गाँव देवगढ़ (खरवा), जोधा सांवतसिंह गाँव सीटावट व चान्दावत खंगारसिंह आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। ये सभी लोग राव साहब के इशारे पर प्राणों की बाजी लगाने को तैयार रहते थे।

उत्तरी भारत के क्रान्तिकारी जब राजनैतिक हत्याओं, डकैतियों एवं बम धमाकों से ब्रिटिश भारत में आतंक, भय और विद्रोही भावना फैलाने के कार्यों में प्रवृत्त थे, तभी राव गोपालसिंह ऐसे कार्यों से सर्वथा अलग रहकर अपने ढंग से अंग्रेज-विरोधी संघर्ष में भाग लेने की तैयारी कर रहे थे। उन्होंने यथा-शक्ति शस्त्रों का संग्रह किया था। हेनरी मार्टिन बन्दूकें जगह-जगह से खरीदकर मंगाई गई। उस समय उन बन्दूकों के कारतूस अप्राप्य थे। इस हेतु कारतूस भरने के औजार मंगवाकर अपने विश्वस्त लोगों को कारतूस भरने के कार्यों में लगाया गया। कुचामन से तोपें ढ़लवा कर मंगाई गई। देशी बन्दूकों और तोपों का बारूद सथाणां से मंगाया जाता था। सथाणां गाँव में उस समय बारूद थोर (डंडा थोर) जलाकर बनाया जाता था जो अन्य बारूद से अच्छा माना जाता था। नसीराबाद से कारतूस गधों पर लादकर लाए जाते थे।

शस्त्रास्त्र संग्रह के कार्य के साथ ही वहाँ के जन

बल को आने वाले विप्लव में संघर्ष हेतु तैयार रखने के कार्य में भी वे सक्रिय थे। उनके उत्साही सहयोगी कार्यकर्ता मगरा-मेरवाड़ा तथा सीमावर्ती जोधपुर राज्य के गाँवों में घूम-घूमकर वहाँ के लोगों को संकेत मिलते ही कार्य में प्रवृत होने के लिये समझाते रहते थे। राव गोपालसिंह की लोकप्रियता उस क्षेत्र में इतनी बढ़ी हुई थी कि वहाँ के रावत, मेहरात, गूजर, राईका, राजपूत, चारण और पुरोहित उनकी एक आवाज पर प्राण न्योछावर करने को तैयार रहते थे। एक समसामयिक चारण कवि ने उनके उस चमत्कारिक अद्‌भुत प्रभाव को इन शब्दों में व्यक्त किया था -

इण खरवै गोपाल रे, देखण रा भुज दोय।
भारत भिड़ियाँ सहस भुज, हेलै अगणित होय।।

राव गोपालसिंह के देखने में तो दो हाथ ही हैं, किन्तु युद्ध क्षेत्र में उतरने पर वे ही हजार भुजा हो जाते हैं और जब वह युद्ध का आह्वान करता है तो अनगिनत हाथ उठ खड़े होते हैं। यानी कि उनकी एक आवाज पर अनगिनत जन-समूह जूझने को तैयार हो जाता है।

यहाँ राव गोपालसिंह की विप्लव हेतु की गई तैयारियों का बहुत ही संक्षेप में वर्णन किया गया है।

(क्रमशः)

संघ दीप जलाता है

- स्वरूपसिंह बांवरला

उबाल अपने रक्त में, तुम लाओ क्षत्रिय भाई,
मत भूलो चोटें कितनी, अपनी पीठ पीछे खाई।

जिंदा रखो वह ज्योति, कभी जो सतियों ने मिल जलाई,
मत भूलो कहानी वीरों की, जिन्होंने लड़ बना दी रक्त तलाई।

कटे सिर धड़ लड़ते जायें, शत्रुओं को धूल चटाई,
तुम भी उठो अब जागो, चेतना अपनी जगाओ भाई।

करो सामना डटकर लड़ो, यह आँधी काली आई,
लड़ो भिड़ो उस जाल से, काली घटा जो है छाई।

करदो नष्ट तुम क्षत्रिय हो, तलवार म्यान से चिल्लाई,
करदो नष्ट तुम क्षत्रिय हो, तलवार म्यान से चिल्लाई।

पर.....

दिखते हो हरदम नशे में, किसने तुम्हें पिलाई,
पड़े हो मधुशाला में, किसने राह यह दिखलाई।

उबाल अपने रक्त में, तुम लाओ क्षत्रिय भाई,
करदो रोशन घट ज्योति में, घटा जो, अंधकार की छाई।

सीख तुम्हें लेनी है जो संघ आज सिखलाता है,
निरन्तरता बनी रहे तो संघ क्षात्रत्व दीप जलाता है।

विचार सरिता

(षटसप्रति लहरी)

– विचारक

स्थितप्रज्ञ महापुरुष की दृष्टि में सब कुछ सच्चिदानंदघन ब्रह्म ही है और वही उसका आत्म-स्वरूप है। उसी में उसकी निरंतर स्थिति होने के कारण अनुकूल या प्रतिकूल की उसके हृदय में भावना ही नहीं होती क्योंकि उसकी दृष्टि में अपने अद्वितीय आत्मा से भिन्न कुछ है ही नहीं। इसलिए वह महापुरुष न किसी से राग करता है और न द्वेष। इच्छा, कामना, स्पृहा जिसकी शान्त हो गई है वह न किसी पदार्थ विशेष की माँग करता है और न जो है उसे त्यागने का आग्रह करता है।

भौतिक दृष्टि से यह संसार तीन तापों से सदा जलता रहता है। कभी आधिव्याधि रूप देहिक ताप, कभी चोर डाकू, पशु-पक्षी, सर्पादि के काटने से होने वाला भौतिक ताप, तथा कभी अतिवृष्टि, अनावृष्टि, बाढ़, भूकम्प आदि दैविक ताप ये त्रिविध ताप संसार में रहते ही हैं। इन भौतिक दु:ख व सुख रूपता को लेकर सामान्य आदमी के चित्त पर तो बड़ा भारी असर होता है लेकिन स्थितप्रज्ञ के अपरोक्ष रूप से मिथ्या जाने हुए पदार्थों की अनुकूलता या प्रतिकूलता को लेकर चित्त पर कोई असर नहीं पड़ता। बाधितानुवृति के सिद्धान्त से जिसने जगत् का बाध ही कर दिया तो अब उसमें होने वाली मिथ्या प्रतीति में उस ज्ञानी की कोई स्थिति बनती ही नहीं। जिसने मरीचिका के जल का बाध कर दिया वह व्यक्ति जल की उस अथाह जल-राशि के प्रति कैसे लालायित हो सकता है, अर्थात् कभी नहीं।

आत्मवान प्रतिकूलता की प्रतीति में उद्वेग रहित बना रहता है तथा सुखों में अर्थात् अनुकूलता में अस्पृह रहता है। सुखों की तृष्णा मानो उसके लिए कभी की विदा हो चुकी है अर्थात् सर्वथा ही उसके सांसारिक सुखों की तृष्णा होती ही नहीं क्योंकि वह परम सुख सिन्धु में डुबकी लगाये हुए होता है। इसी कारण उसके राग, भय, क्रोध बीते हुए रहते हैं। कामना का मनोरथ जिसका सदा के लिए सो गया हो, पूर्ण तृप्त होने के नाते इच्छा भी जिसकी गलीभूत हो गई हो, जन्मजन्मान्तर के प्रभाव से चित् में उद्भित होने वाली वासना भी जिसकी शान्त हो गई हो, स्पृहा अर्थात् तृष्णा या अभिलाषा जिसकी पदार्थ विशेष में किंचितमात्र भी नहीं उठती उस वीतराग महापुरुष के लिए न कुछ ईष्ट है और न कुछ अनिष्ट है।

अज्ञानदशा के कारण अज्ञानीजन संसार के पदार्थों को सत्य मानकर ही उनमें राग व कामना करता है लेकिन जिसने संसार को मृगतृष्णा के जलवत् जान लिया कि यह तो सब मात्र प्रतीति है, उसे संसार की प्रतीयमान वस्तुओं से क्या आनंद होना है? जिसको बड़े जोर से प्यास लगी हुई है अत: जल की इच्छा वाला है लेकिन मृगतृष्णा के जल की नदी में चाहे बाढ ही आवे तो भी उसको उससे क्या प्रसन्नता होनी है? अर्थात् कभी नहीं। जो पहले से अमृत से तृप्त है वह मिथ्या नदी के जल से क्या राग करेगा। स्थितप्रज्ञ निरंतर आत्मामृत से तृप्त है अत: उसे प्रतीतिमात्र दृश्य प्रपञ्च की किसी भी वस्तु से राग नहीं होता।

प्रपञ्च को सत्ता रहित देखने वाले ज्ञानी के जब किसी से राग ही नहीं तब न वस्तु के मिलने की रुकावट में क्रोध है और न किसी वस्तु के नष्ट होने का भय है। अज्ञान के कारण जो जीवत्व की प्रतीति थी वह आत्मानुभव के प्रकाश में विलीन हो गई। अंधेरे का कोई अस्तित्व नहीं होता। प्रकाश का अभाव

ही अंधेरा है। प्रकाश होते ही हजारों साल की कंदरा का अंधेरा तत्काल मिट जाता है, ठीक इसी प्रकार आत्मज्ञान के उजाले में जीवभाव का अज्ञान तत्काल भाग जाता है। अब जब जीवपना ही नहीं रहा तो सुख-दु:ख होवे किसको?

ज्ञानी पुरुष सभी जगह, सभी परिस्थितियों में शुभ अशुभ, अनुकूल प्रतिकूल में आसक्ति रहित ही रहता है। जैसे स्वप्न से जगे जाने पर स्वाप्निक वस्तुओं से आसक्ति हट जाती है वैसे ही स्वरूप में जगा हुआ होने से ब्रह्मवेता न संसार की वस्तुओं का अभिनन्दन करता है और न ही द्वेष करता है। ब्रह्मवेता को यदि त्रिलोकी का राज्य मिल जाये तो भी उस राज्य प्राप्ति में हर्ष या उसका अभिनन्दन नहीं करता और न ही द्वेष पूर्वक किसी व्यक्ति विशेष या वस्तुविशेष में घृणा ही करता है। वह तो बस एक अज्ञान रूपी शत्रु के ही पीछे पड़ा और उसे नष्ट करके आत्म साम्राज्य पा गया। अब उसे कोई चिन्ता नहीं और न कोई कर्तव्य ही शेष रहा जिसे वह करे। वह तो स्व शरीर से लेकर ब्रह्मा पर्यन्त सबको स्वप्न तुल्य जानता है अत: स्नेह किससे करे? उसका स्वयं का स्नेह स्वयं से ही होता है अर्थात् उसकी प्रज्ञा स्वयं में ही प्रतिष्ठित रहती है। ऐसे स्थितप्रज्ञ महापुरुषों के चरणों में मेरा कोटिश: प्रणाम।

शिवोहं! शिवोहं!! शिवोहं!!!

चलो हम बात बदल कर देखें

– ईश्वरसिंह ढीमा

चलो हम बात बदल कर देखें
तू भी अपनी बात बदल दे
मैं भी अपनी बात बदल दूँ
फिर जीवन को लेखें
चलो हम बात बदल कर देखें।

छोड़ो अब ये कहना रोज
भाई है भाई पर बोझ
सुर में अपना सुर मिलाकर
करें नए शब्दों की खोज।

उन शब्दों में अर्थ हो अपने
उन शब्दों में प्राण भरा हो
उन शब्दों में नए हो सपने
उन शब्दों में मान धरा हो।

ऐसे शब्दों की भाषा को
हृदय सजाकर देखें
चलो हम बात बदल कर देखें।

हम हैं शत्रु एक दूजे के
एक दूजे की खींचें टांग।
एक दूजे को नीच दिखाने
पी है हमने भर-भर भांग।

ईर्ष्या द्वेष क्रोध काम के
विषधर प्याले फेंकें।
चलो हम बात बदल कर देखें।

कन्धे से कंधा मिलाकर
साथ चले हैं, साथ चलेंगे।
मरुभूमि की भीषण आग में
हिमगिरि के शीतल भाग में
बहादुरी से हम पलेंगे।
क्यों कायर-मुर्दों की भाँति
जीवन पथ पर रेंकें।

चलो हम बात बदल कर देखें।

न्याय

– रघुवीरसिंह बिंजासी

ठाकुर बदेलव सिंह चबूतरे पर बैठे हुक्का गुड़गुड़ा रहे थे। बरसात के अभाव में जब फसल दोपहर के बाद मुरझा जाती है और पत्ते बेजान से होकर नीचे की ओर लटक जाते हैं, ठीक ऐसे ही ठाकुर बलदेव सिंह का चेहरा मुरझाया हुआ था। आँखों के नीचे का माँस जैसे अपनी जगह से हटकर लटक गया था। हुक्के की गुड़गुड़ाहट में मरी हुई, दबी हुई, नीरस आवाज आ रही थी। वे अतीत में खोये हुए हुक्का पीए जा रहे थे।

ठाकुर बलदेव सिंह का घर, गाँव से कुछ दूर-हटकर विशाल टिल्लों के बीच बना हुआ है। उन टिल्लों पर किसी से सटीक चित्रकारी की हो, ऐसी सुंदर लहरें बनी हुई हैं। खींप की बनी हुई एक बुजुर्ग झोंपड़ी है, जिसकी हालत रीढ की हड्डी टूटे हुए जानवर जैसी हो गई है। लकड़ी की छत का बना एक मध्यम कमरा जिन पर सालों से मरम्मत की किसी ने सुध नहीं ली है और सामने एक गोबर का बना कच्चा चबूतरा है।

चिड़िया जब उत्साह से अपना आसियाना बनाती है, उसमें अंडे देती है, अंडे सेती है, अपने बच्चों को खुशहाली के साथ बड़ा होते देखती है। जब बच्चे उड़ने लगते हैं तो चिड़िया हमेशा के लिये वह आसियाना छोड़कर चली जाती है। उसके बाद आसियाना का जो हाल होता है वही हाल ठाकुर बलदेव सिंह के घर का है।

थार रेगिस्तान और ज्येष्ठ का महीना-जहाँ ऊपर से सूरज आग उगलता है, वहीं नीचे धरती अँगारे बन जाती है और सांय-सांय करती काली-पीली आँधी घरों में बालू रेत का ढेर लगा देती है। ऐसे टिल्लों के बीच ठाकुर बलदेव सिंह का घर मात्र सिर ढकने एवं दुःखों के यादगार स्थल के अलावा कुछ नहीं है।

चाँदमल विश्नोई अक्सर ठाकुर के पास आता था। लेकिन आज ठाकुर के चेहरे की उदासी देखकर थोड़ा सहम गया। वो अच्छी तरह जानता था, कि ठाकुर आज गिरधारी और गौरी की याद में डूबे हुए हैं। इन दोनों के अभाव में ठाकुर अकेलेपन में झुलस रहे हैं। पूरा गाँव जानता है कि ठाकुर का एकमात्र पुत्र कितना होनकार था। उसके हृष्ट-पुष्ट शरीर को देखकर गाँव के लड़के ईर्ष्या करते थे और माएँ अपने पुत्रों को गिरधारी जैसा सुडोल बनाने का सपना देखा करती थी। ठाकुर का भी एक सपना था। गरजते हुए वायुयान जब पोकरण सेना मथक के आस-पास मँडराते थे तो ठाकुर यह कहना न भूलते थे कि मेरा गिरधारी भी एक दिन वायुसेना में भर्ती होगा। अपने गाँव का नाम रोशन करेगा। वह इतना बहादुर है कि देश के लिए जान न्योछावर करने में भी कभी नहीं हिचकेगा। जब अपने गाँव के ऊपर से विमान में उड़ते हुए जाएगा तो मैं हाथ हिलाकर अभिनंदन करूँगा, किसी को पहचाने या नहीं पहचाने वो मुझे जरूर पहचानेगा। बात करते समय उनके चेहरे की चमक दुगुनी हो जाती थी। कभी गौरी को चिढाने के लिए कटाक्ष भी किया करते थे, मुझे वह क्यों पहचानेगा। वह तो अपनी माँ का दुलारा है ना। इस पर गौरी आनंदित हो उठती थी। सबके सामने वह कुछ न बोलती थी, मुस्कुराकर हामी भर देती थी।

लेकिन होनी होकर रहती है। इतिहास साक्षी है, स्वयं भगवान भी उसे टाल नहीं सकते। ठाकुर के घर में ऊँट-गाड़ी और ऊँट दोनों ही निराले थे। ठंडी के

दिनों में ऊँट की गर्दन से मद झरता रहता था, मुँह से झाग निकलते रहते और गिलोल लगातार मुँह से बाहर बहती थी। जब ऊँट मदमस्त होता तो कंपा देने वाली सर्दियों में भी लोगों के पसीने छूटते थे। इन दिनों ऊँट के पैरों की नाल न खुलती थी। किन्तु उस दिन तपती गर्मी थी। जेष्ठ का महीना आधा निकल चुका था। बरसात का नाम न था। मेघराजा तो ऐसे गायब थे, जैसे चुनाव जीतने के बाद नेता गायब हो जाते हैं। गिरधारी की तबीयत कुछ नरम थी। रात को बिना पेट भरे सो गया था। सुबह उठकर ऊँट को खोल दिया, अकेले चरने के लिये। उस दिन वह साथ न जा सका। ऊँट स्वाधीन था और चरते हुए दूर तक निकल चुका था। जब दोपहर तक भी ऊँट घर नहीं लौटा तो गिरधारी उसे तलाशने निकला। ऊँट तो तीसरे प्रहर घर लौट आया लेकिन गिरधारी कभी नहीं लौटा। आज भीषण गर्मी और लू उसका काल बनकर आई थी। उसकी माँ गौरी भी बिना पानी के तड़पती मछली की तरह ज्यादा दिन तक जी न सकी।

चाँदमल विश्नोई राम-राम करके ठाकुर के पास चबूतरे पर बैठ गया और मिजाज ठीक करने के लिए कहने लगा-ठाकुर साहब अभी मैं रेडियो पर समाचार सुन कर आया हूँ, भूमि अधिग्रहण मामले पर जज ने भूमि माफियों के पक्ष में निर्णय सुनाया है। जज ने सही न्याय नहीं किया। ठाकुर बलदेव सिंह गंभीर होकर बोले-इस जमाने में जब ऊपर वाला भी सही न्याय नहीं करता है तो इस मृत्युलोक के जज का दोष ही क्या है? अब चाँदमल की तार्किक शक्ति जवाब दे चुकी थी। वह शान्त रहा।

ठाकुर फिर बोले-मैंने अपने भाईयों के लिए जो किया वह तुम से छिपा है? पूरा गाँव जानता है, पिताजी के अवसान के बाद मैंने, उनको अपने बच्चों से भी ज्यादा प्यार दिया। घर में था ही क्या जो एशो-आराम करता? पहले ही इतना उधार था कि अब तो लोगों ने उधार के डर से मेरे घर की ओर से निकलना तक बंद कर दिया था। ''जमीन अपनी माँ होती है, उसे कभी बेचना मत'' पिताजी के ये शब्द हमेशा मेरे कानों में गूँजते रहे और मैंने उनकी आज्ञा का पालन किया। दोनों भाईयों की आवश्यकता की पूर्ति के लिए मैं दुगुने जोश से मेहनत करने लगा। कुछ ही वर्षों में पासा पलट चुका था। ईश्वर की कृपा और मेरी मेहनत रंग लाई। कर्जा चुकता हो गया। दोनों भाईयों का घर बसाया। उपजाऊ जमीन उनके हिस्से में रखी। आज देख रहे हैं, घर के पास से निकलते हैं तो मुँह फेर लेते हैं। मूछों में हँसते हैं। जब भगवान अन्याय करता है, तो इंसान भी उसका साथ देते हैं। आखिर इंसान भगवान की बनाई हुई कठपुतली ही तो है। फिर एक शायराना अंदाज में चाँदमल की ओर इशारा करके बोलते हैं -

''कौन किसका साथ देता है,
बुरा वक्त आने के बाद,
आँखों की पुतली तक फिर जाती है,
इंसान के मर जाने के बाद''

थोड़ी देर रुकने के बाद गिरधारी को याद करते हुए कहते हैं-कितना बुद्धिशाली, बलशाली था वह? आज वह होता तो इस घर की जो दुर्दशा देख रहे हो वह न होती।

अब ठाकुर बलदेव सिंह अपनी अश्रुधारा न रोक सके। वे गौरी के अवसान का दुःख अपनी जुबान से कभी बयां न कर सके लेकिन आँसुओं के जरिए सब कुछ स्पष्ट हो जाता था। पति के वियोग में पत्नी अपने दिल का दर्द सबके साथ बाँट कर हल्का कर लेती है लेकिन पत्नी का वियोग पति के अन्तर मन को जलाता रहता है। औरतों की तरह रो-रो कर अपना दुःखड़ा सुनाये और मन को हल्का कर सके ऐसी शक्ति भगवान ने आदमी को नहीं दी है। वह सिर्फ तड़फता रहता है और लाश की तरह जीता है।

आज चाँदमल, ठाकुर के दर्द को कम न कर सका और इजाजत लेकर चला गया। ठाकुर ने अपनी बेजान सी काया को चबूतरे से उठाया और लड़खड़ाते झोंपड़ी में गये। मात्र उदरपूर्ति हेतु रुखा-सूखा खाया, एक नजर झोंपड़ी की लटकती हुई खींप को देखा, कमरे में लगाई हुई आड़ी-तिरछी लकड़ियों को ठीक करने का असफल प्रयास किया और ऊँट गाड़ी के धुरे को देखने लगे। धुरे के साथ लगे दोनों पहिए दीमक के पेट में समा चुके थे। अब ठाकुर के पास ऊँट-गाड़ी का कबाड़, बिखरा हुआ आसियाना और हुक्के के सिवाय रह ही क्या गया था?

कुछ दिन बाद राधेश्याम गाँव की ओर से लगभग दौड़ता हुआ ठाकुर के घर पहुँचा और चरण स्पर्श करने के बाद ठाकुर के पास बैठ गया। राधेश्याम पास के शहर में विज्ञान विषय से स्नातक कर रहा था। थार रेगिस्तान के इस छोटे एवं पिछड़े हुए गाँव के लोगों के लिये यह गौरव की बात थी। वह शहर से अखबार साथ लेकर आया था। ''न्यायालय द्वारा भ्रष्ट नेता को सजा'' अखबार की सुर्खियों में था। राधेश्याम इस समाचार को बड़े जोश के साथ पढ़कर सुना रहा था। अखबार में नीचे लिखा था -

''जमीं बेच देंगे, जमा बेच देंगे, मुर्दे के सिर का ये कफन बेच देंगे : न्याय के देवता गर चुप रहे तो वतन के नेता वतन बेच देंगे''

ठाकुर ने गंभीरता से कहा-बेटा जब ऊपर वाला ही अन्याय करता है तो इन न्याय के देवता से आशा मत रखो।

अब राधेश्याम भी गंभीर हो चुका था। वह चाँदमल की तरह मूक दर्शक नहीं रहा। उसके पास शिक्षा थी। तार्किक शक्ति थी। विषय को समझने और समझाने में अपनी बुद्धि कौशल्य का प्रयोग कर सकता था। कहने लगा-भगवान के घर देर है, अंधेर नहीं। इंसान जैसा कर्म करता है, उसे वैसा ही फल मिलता है। कर्मों का फल इसी जन्म में मिल जाता है, लेकिन कभी देर हो जाती है तो उसका फल अगले जन्म में भी भुगतना पड़ता है। यह मैं नहीं कहता, शास्त्रों में लिखा है और बड़े-बड़े विद्वानों ने इस सत्य को स्वीकार किया है।

आपने इस जन्म में हमेशा नेक काम किया है, निस्वार्थ भाव से दूसरों की सेवा की है। दूसरों की खुशी में अपनी खुशी महसूस की है। लेकिन माफी चाहूंगा, जो आज आपके साथ हो रहा है, वह पिछले जन्म के कर्मों का फल हो सकता है।

यह बात ठाकुर बलदेव सिंह के हृदय में गहरी उतर चुकी थी। राधेश्याम के तर्क को वे नजरअंदाज नहीं कर सकते थे। अब ठाकुर के तन, मन में इस विषम परिस्थिति का सामना करने की शक्ति का संचार हो चुका था। उनकी आँखों में चमक थी। ठाकुर का मुरझाया हुआ चेहरा वैसे ही खिल गया जैसे सूखती हुई फसल बरसात के बाद खिलने लगती है। अब तो हुक्के के गुड़गुड़ाने की आवाज भी बदल चुकी थी। ध्वनि में वही जोश था जो वर्षों पहले हुआ करता था।

राधेश्याम ने ठाकुर को प्रणाम किया, अखबार बगल में दबाया और घर जाने की इजाजत माँगी। वह ऊँचे टिल्ले पर चढ़ते हुए धीरे-धीरे उनकी आँखों से औझल हो रहा था, साथ ही औझल हो रही थी ठाकुर की निराशा।

●

मेरे हाथ में रहने वाला फूल दूसरे के हाथ में जाकर कांटा बने, तो असल में वह फूल ही नहीं है। जिसमें धीरज है, जिसकी दृष्टि में समता है, जिनकी कामनाएँ शान्त हो गई हों और जिसकी अपनी निजी कोई प्रसन्नता नहीं हो, उसे कौन नहीं पूजता।

- पू. तनसिंहजी

अपनी बात

कई लोग आते हैं और प्रश्न करते हैं कि क्या क्षत्रिय युवक संघ में जीवन की सार्थकता है? जीवन सार्थक बनता है? इस संदर्भ में एक बहुत सुन्दर उदाहरण है-

एक विश्वविद्यालय का प्रोफेसर एक संत के पास गया। एक ऊँचे पहाड़ पर संत का झोंपड़ा था। प्रोफेसर पहाड़ पर चढता-चढता हाँफ गया। जाकर बैठा। जाते ही उसने कहा कि दर्शनशास्त्र पर कुछ बात करने आया हूँ। ईश्वर है?

संत ने कहा-आप थके मांदे हैं, थोड़ा विश्राम कर लें। चेहरे पर पसीना है, थोड़ा सूख जाने दें और तब तक मैं चाय बना लाता हूँ। हो सकता है चाय पीते-पीते ही उत्तर मिल जाएगा और अगर उत्तर न मिला तो पीछे उत्तर दूंगा। यह कहकर संत भीतर चाय बनाने चला गया। वह प्रोफेसर सोचने लगा, चाय पीते-पीते उत्तर मिल जायेगा, यह आदमी पागल तो नहीं है? मैं पूछता हूँ, ईश्वर है? यह कहता है चाय पीते-पीते उत्तर मिल जायेगा। ईश्वर के होने का उत्तर चाय पीते-पीते कैसे मिल सकता है? शक होने लगा प्रोफेसर को कि मैं नाहक ही इतने ऊँचे पहाड़ पर चढ कर आया। यह आदमी कुछ विक्षिप्त मालूम होता है। खैर, लेकिन अब आ ही गया हूँ, तो दो घड़ी और सही।

संत चाय बना लाया। उसने प्रोफेसर के हाथ में प्याली दे दी। चाय ढालने लगा केतली से। कप भर गया, प्याली भर गई, फिर भी चाय ढालना चालू रहा। तब प्रोफेसर चिल्लाया कि रुकिए। मुझे पहले ही शक हो गया कि आपका दिमाग कुछ खराब है। एक बूंद जितनी जगह भी नहीं है प्याली में, अब क्या फर्श पर ही चाय उंडेल देनी है?

संत हंसने लगा। उसने कहा-यही तो उत्तर है। तुम्हें दिखाई पड़ रहा है कि प्याली में एक बूंद चाय रखने की अब जगह नहीं है। तुम्हारे भीतर परमात्मा को रखने की एक बूंद जितनी सी भी जगह है? पूछने चले आये हो ईश्वर है या नहीं। पहले यह तो स्वयं के भीतर देखो कि तुम्हारे भीतर उसको रखने की जगह है। तुम हो खाली? जो खाली है, वही प्रश्न पूछने का हकदार है, क्योंकि खाली में ही प्रवेश हो सकता है।

परमात्मा तो चारों तरफ से कोशिश कर रहा है तुम्हारे में प्रवेश कर जाने की, मगर तुम्हारी प्याली इतनी भरी है कि कहीं कोई जगह नहीं है। उसकी बदलियाँ तो तुम्हें अभी भी घेरे खड़ी हैं। उसके लोक में तो सदा सावन है। उसके लोक में तो कभी सावन के अतिरिक्त और कोई ऋतु होती ही नहीं। वहाँ तो सदा एक ही ऋतु है-सदा हरापन, सदा जीवन, सदा यौवन। वहाँ पतझड़ कभी नहीं आता। परमात्मा तो केवल वसंत को ही जानता है। जैसे तुम केवल पतझड़ में ही जानते हो, ऐसे परमात्मा केवल वसंत को ही जानता है। जैसे तुम केवल मृत्यु को ही जानते हो, परमात्मा केवल अमृत को ही जानता है।

परमात्मा तुमसे ठीक विपरीत छोर पर खड़ा है, और चारों तरफ से घेरे हुए कि कभी मौका मिल जाए, कभी तुमसे भूल-चूक हो जाए, द्वार दरवाजे खुले छूट जाएँ, तो वह प्रवेश कर जाए। वह रात में भी तुम्हारे चारों तरफ खड़ा रहता है, जैसे एक चोर अवसर की तलाश में रहता है।

हमारे यहाँ एक नाम दिया गया है-हरि। हरि का अर्थ होता है चोर। जो हर ले वह हरि। जो झपट ले, जो मौका पा जाए तो तुम्हें ले उडे-वह हरि। तुम्हें घेरे खड़ा है। कभी मौका मिल जाए, शायद कभी तुम द्वार पर सांकल लगाना भूल जाओ, या खिड़की रात में खुली छूट जाए तो वह घुस आये। मगर कहीं से तुम्हारे भीतर जगह नहीं, तुम बिल्कुल भरे हो। बूंद भर भी

रखने को जगह नहीं। नहीं तो उसकी बदली तुम्हें सदा घेरे है।

देखते हो, वर्षा जब होती है, पहाड़ पर भी होती है लेकिन पहाड़ खाली रह जाते हैं। क्योंकि पहले से ही भरे हैं, अब और भरें कैसे? गड्ढों में जल भर जाता है, पहाड़ खाली रह जाते हैं। तुम गड्ढों से राज सीखो भक्ति का। गड्ढे की कला क्या है? क्योंकि गड्ढा खाली है, इसलिए भर जाता है, झील बन जाती है। जो खाली है, वह भर जाता है। और जो भरा खड़ा है, वह उस कृपा से खाली का खाली ही रह जाता है। वर्षा उस पर भी होती है। हिमालय के शिखर पर भी वर्षा होती है, लेकिन बहकर गड्ढों में चला जाता है। पहाड़ पर कुछ भी रुकता नहीं।

तुम पर भी परमात्मा बरस रहा है, मीरा पर भी बरस रहा है। मीरा में भर जाता है। तुम में नहीं भर पाता। तुम्हारे अहंकार के पहाड़ बड़े ऊँचे हैं। तुम्हारा अहंकार बिल्कुल गौरीशंकर जैसा है। मीरा झील बन जाती है। खूब प्यासी झील बन जाती है। खूब गहरी झील बन जाती है।

उतना ही गहरा परमात्मा तुममें उतरेगा जितना गहरा तुम खाली हो गये। उसी अनुपात में उतरेगा। उससे ज्यादा उतर नहीं सकता। कैसे तुम खाली होओ? तुम्हारा कृत्य पर भरोसा छूट जाए, तो तुम खाली हो जाओ। जिस दिन तुम्हारे बिना किये प्रार्थना हो जाती है, उसी दिन पहुँच जाती है। तुम्हारे द्वारा की गई प्रार्थना नहीं पहुँचेगी। तुम जो भी करोगे, उससे तुम्हारा अहंकार भरेगा। कृत्य से अहंकार भरता है। जिस दिन प्रार्थना सहज उठेगी, प्रार्थना पहुँच जायेगी।

क्षत्रिय युवक संघ को जीवन में उतारने की जगह ही नहीं है तो जीवन सार्थक कैसे बनेगा? क्षत्रिय युवक संघ में आएँ, साथ चलें, सार्थकता का अनुभव करें, इसके लिये समय कहाँ है? हमारे जीवन के अमूल्य समय को तो हमने सांसारिक सुखों की प्राप्ति हेतु पूरा लगा रखा है? अत: क्षत्रिय युवक संघ के लिए समय ही नहीं बचता। कोई भी वस्तु की सार्थकता इसमें है कि वह जिस काम के लिये बनी है, उस काम में आए। भगवान ने हमें यह जीवन दिया है, किसलिए? इस दुर्लभ जीवन का उपयोग हम परमात्मा तक पहुँचने के लिए करें, इसीलिए तो यह जीवन है और इसी में इस जीवन की सार्थकता है। लेकिन हम इस मायावी संसार में ऐसे उलझे हैं कि धन, संपत्ति, सुविधाएँ, पद, प्रतिष्ठा पाने को ही सार्थकता मानकर चल रहे हैं और इसीलिए पूरा जीवन इन्हीं सांसारिक उपलब्धियों की प्राप्ति हेतु ही लगा रखा है। और यह जीवन की वास्तविक सार्थकता नहीं है। क्षत्रिय युवक संघ की साधना निरंतर गतिमय है। संघ की यह वर्षा सबके लिये है लेकिन इस वर्षा को ग्रहण करने के लिये समय किसके पास है? सांसारिक उपलब्धियों और उसी प्रकार के विचारों से हमारा जीवन भरा पड़ा है तो संघ के वर्षा जल को ग्रहण करने को स्थान कहाँ है? समय दें, निरंतर इस मार्ग पर चलें, जो कहा जाए उसे जीवन में ग्रहण करें तो यह भी समझ में आ जाएगा कि यह साधना जीवन को सार्थक बनाने की है।

सद्‌गुण

दान करके उसे गुप्त रखना, घर आये शत्रु का भी सत्कार करना, परोपकार करके कहना नहीं और दूसरे के उपकार को प्रकट करते रहना, धन-वैभव होने पर अभिमान न करना, किसी की पीठ पीछे उसकी निन्दा न करना, अपना दोष बताये जाने पर उत्तेजित न होना और अपने प्रति उपकार करने वाले के प्रति हमेशा कृतज्ञ रहना, ये ऐसे सद्‌गुण हैं जो किसी भी पुरुष को महापुरुष बना देते हैं।

शिविर सूचना

यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष है कि श्री क्षत्रिय युवक संघ के आगामी प्रशिक्षण शिविर निम्न प्रकार से होने जा रहे हैं -

क्र.सं.	शिविर	समय	स्थान	मार्ग आदि
01	प्रा.प्र.शि. (बालक)	24.12.2022 से 26.12.2022	भैसाणा (गुजरात)	
02	प्रा.प्र.शि. (बालिका)	24.12.2022 से 27.12.2022	नीमच (म.प्र.)	
03	प्रा.प्र.शि. (बालिका)	25.12.2022 से 28.12.2022	रामसर (बाड़मेर)	
04	मा.प्र.शि. (बालिका)	25.12.2022 से 31.12.2022	पुष्कर (अजमेर)	जयमल कोट, पुष्कर।
05	मा.प्र.शि. (बालक)	25.12.2022 से 31.12.2022	बाड़मेर	आलोक आश्रम, गेहूं रोड़, बाड़मेर।
06	मा.प्र.शि. (बालक)	25.12.2022 से 31.12.2022	धनोप माताजी (भीलवाड़ा)	
07	मा.प्र.शि. (बालक)	25.12.2022 से 31.12.2022	पून्दलसर (बीकानेर)	जयपुर-बीकानेर राजमार्ग पर श्री डूंगरगढ़ के पास।
08	मा.प्र.शि. (बालक)	25.12.2022 से 31.12.2022	नाचना (जैसलमेर)	पोकरण से नाचना बस।
09	मा.प्र.शि. (बालक)	25.12.2022 से 31.12.2022	पाली	पाली-भालेलाव रोड़ पर वन्दे मातरम एकेडमी।
10	प्रा.प्र.शि. (बालक)	28.12.2022 से 31.12.2022	मंदसोर (म.प्र.)	

दीपसिंह बेण्याकाबास
शिविर कार्यालय प्रमुख, श्री क्षत्रिय युवक संघ

धारावाहिक रचना **'पृथ्वीराज चौहान'** जो प्रदर्शित होती रही है,
इस अंक में कारणवश प्रकाशित नहीं की जा सकी, इसके लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।
अगले अंक से पुन: प्रकाशन प्रारम्भ होगा।

नव चयनित समाज बंधुओं को हार्दिक बधाई एंव उज्जवल भविष्य के लिये शुभकामनाएं

गोपाल कृष्ण सिंह आवाय
(कम्प्यूटर अनुदेशक)

मग सिंह राजमथाई
(अध्यापक)

अनवर सिंह म्याजलार
(अध्यापक)

भंवर कँवर पत्नी स्वरूप सिंह दवाड़ा
(अध्यापिका)

मानवेन्द्र सिंह केरालिया
(अध्यापक)

देवेंद्र सिंह सांखला
(अध्यापक)

नटवर सिंह जिजनियाली
(शारिरिक शिक्षक)

विक्रम सिंह रामदेवरा
(शारिरिक शिक्षक)

अजयपाल सिंह
पुत्र रतन सिंह बड़ोड़ा गांव
(पटवारी)

पृथ्वीपाल सिंह पुत्र नरपतसिंह राजगढ़
(गोल्ड मेडल)

-: शुभेच्छू :-

गणपत सिंह अवाय, सांवल सिंह मोढ़ा, भवानी सिंह मुंगेरिया,
तारेंद्र सिंह जिजनियाली,उम्मेद सिंह बडोडा गांव,अमर सिंह रामदेवरा,
भोजराज सिंह तेजमालता,स्वरूप सिंह नेड़ान,खंगार सिंह झलोड़ा,
गोपाल सिंह केरालिया,रणजीत सिंह चौक, बाबू सिंह सोनू,
महिपाल सिंह तेजमालता,यशपालसिंह राजगढ़, धर्मपाल सिंह आस्कन्दरा,
स्वरूप सिंह दवाड़ा,दिप सिंह राजगढ़,नरपत सिंह लूणा,भोपाल सिंह झलोड़ा,
मनोहर सिंह टावरिवाला,लूण सिंह बड्डा

संघ के सहयोगी व सामाजिक गतिविधियों में सदा सक्रिय रहने वाले अमर सिंह जेठा का अध्यापक पद पर चयन होने के उपलक्ष्य में हार्दिक बधाई एवं उज्जवल भविष्य की शुभकामनाएँ

-: शुभेच्छू :-

भीम सिंह/गुमान सिंह जी जेठा, रेवंत सिंह/सगत सिंह जी चांधन
मनोहर सिंह/अभय सिंह जी भैरवा, दुर्जन सिंह/देवी सिंह जी बलाई
भैरू सिंह/अचल सिंह जी चांधन, कंवराज सिंह/राण सिंह जी चांधन
प्रताप सिंह/जेठमाल सिंह जी चांधन, भोम सिंह/शैतान सिंह जी चांधन
उगम सिंह/हिम्मत सिंह जी लूणा, हुकम सिंह/मूल सिंह जी सगरा
दुर्जन सिंह/हुकम सिंह जी सोढाकोर,उम्मेद सिंह/ कल्याण सिंह जी बडोड़ा गांव
राजेंद्र सिंह/अचल सिंह जी चांधन, उगम सिंह/जेठमाल सिंह जी चांधन
छत्तर सिंह/प्रेम सिंह जी डेलासर, ओम सिंह/गुमान सिंह जी जेठा
प्रहलाद सिंह/तार सिंह जी करमों की ढाणी, अशोक सिंह/पन्ने सिंह जी भीखसर
मदन सिंह/बाबू सिंह जी म्याजलार, पदम सिंह/नेण सिंह जी रामगढ़

दिसम्बर, सन् 2022
वर्ष : 59, अंक : 12

समाचार पत्र पंजी. संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City /411/2020-22

संघशक्ति
ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353
E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org

श्रीमान् ....

....

....

स्वत्वाधिकारी श्री संघशक्ति प्रकाशन प्रन्यास के लिये, मुद्रक व प्रकाशक, लक्ष्मणसिंह द्वारा ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर से : गजेन्द्र प्रिन्टर्स, जेन मन्दिर सांगाकान, सांगों का रास्ता, किशनपोल बाजार, जयपुर फोन : 2313462 में मुद्रित। सम्पादक-लक्ष्मणसिंह